श्रीमान प० जयकुमार जी जैन शास्त्री
सुपुत्र लाला श्रीपाल जी जैन रईस (एटा)

POPULAR PRESS DELHI

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

# मङ्गलाचरण।

## पाठ १

परम इष्ट मोक्ष और उसका मार्ग बताने वाले पञ्च परमेष्ठी उनका मूल वाचक बीज ॐकार तथा भिन्न २ वाचक पञ्च परम पद तिनके स्वरूप का तथा शब्दरूप ज्ञान रूप,वाणी ॐ कार ध्वनि का सामान्य वरनन।

वीतें रागादिक दोषाभज वीत राग विज्ञान स्वरूप।
ॐकार परमेष्टी वन्दौं ध्यान करौं सोऽहं त्यो स्वरूप॥ १॥
श्वास नि श्वास माहि सो भासै चिदानन्द चैतन्य स्वरूप।
निज सम्यक्त्व रूप ,अनुभूती अनुभव करि सोऽह चिद्रूप॥ २॥
सोऽहं सो ऽ ह सो मैं सो मैं ज्ञान दर्श सुख बलादि रूप।
यह चैतन्य रूप अनुभूती अन्य द्रव्यतें पृथक स्वरूप॥ ३॥
निज चैतन्य ज्ञानमे भासें स्वपर द्रव्य गुण पर्यय ज्ञेय।
निज मे थिरह्वै पर को त्यागी हेयादेय बुधि परमादेय॥ ४॥
वीत राग विज्ञान यही है निज स्वरूप शुद्धातम वेय।
योगी जन इस ही मे थिर ह्वै बंधन काटें तजि सब हेय॥ ५॥
सोही श्रुत विज्ञान वुही है ध्यान वुही तप परमादेय।
आतमा जिस करि समा साध्य होय स्व स्वरूप मे लय थिरथेय॥६॥
जग मे जिय कों निज शुद्धातम निश्चयतें गहि निज शरणेय।
तथा पञ्च परमेष्ठी गुरु है बोधक व्यवहारतें शरणेय॥ ७॥
तिनका कथन क्रम अब आगें मङ्गलरूप परम आदेय।

ॐकार वाचक परमेष्ठी पञ्च परम पद गर्भित ज्ञेय ॥ ८ ।
अरहन्त अशरीरी आचारज अरुपाध्याय मुनी पद धार ।
पञ्च परम गुरु वच हित कारी जग जीवन को तारन हार ॥ ९ ॥
चारि घातिया नशि शुद्धातम ज्ञान दर्श सुख वल गुण नन्त ।
दान लाभ भोगोपभोग सब छ्यालिस अतिशय गुण प्रघटन्त॥१०॥
वीतराग सरवज्ञ हितंकर वक्ता परमागम परमेश ।
शुभदेहस्थ वदि परमातम ध्यान करौं अरहन् धर्मेश ॥ ११ ॥
सर्व कर्म मल नशि सिद्धातम ज्ञायिक लोकालोक अनन्त ।
सम्यक दर्शन ज्ञान अगुरु लघु अवगाहन सूक्षम बलनन्त ॥ १२ ॥
निर्बाधारित वस्तु द्रव्य परमेय चेतना मूर्त्त प्रदेशता सन्त ।
पुरुषाकार लोक शिखिर स्थिति अशरीरी नमि ध्यान धरन्त ॥१३॥
द्वादश तप दशधर्म त्रिगुप्ती पट आवश्यक पञ्चाचार ।
आप आचरैं आचरवावैं आचारज नमि ध्यान सुधार ॥१४॥
अङ्ग कादश चदह पूरव पाठी धर्मोपदेश करन्त ।
सम्यद् दृग ज्ञान व्रत रत्न त्रय उपाध्याय नमि ध्यान धरन्त ॥१५॥
निर्विकार निर्ग्रन्थ दिगम्बर मुद्रा नग्न शांति धर सत ।
विषयाशा आरम्भ न मुनि के मूलोत्तर गुण ध्यान करंत ॥ १६ ॥
गुप्ति समिति व्रत धर्मानुप्रेक्षा परिषह जयावश्यकाचार ।
ज्ञान ध्यान तप लीन निरन्तर साधैं मोक्ष मार्ग हितकार ॥ १७ ॥
वीत राग निर्दोष विमल गुण धारैं तत्व भिज्ञ विज्ञान ।
सत्य दया मय धर्म हितंकर वक्ता पञ्च परम गुरु जान ॥ १८ ॥
पूरव भये अनादि अनन्ते वर्तमान होंय आगें जेय ।
नाम स्थापना द्रव्य भावकरि वन्दिध्यान करौं परम गुणेय ॥ १९ ॥
कृत्या कृत्रिम त्रिलोक वर्त्ती तीरथ क्षेत्र चैत्य जिन बिम्ब ।

त्रिकाल वर्ती तीर्थंकर सब पञ्च गुरू नमिस्याऊ बिम्ब ॥ २० ॥
पञ्च परम पद तिन प्रथमाक्षर कहिये अ-अ-आ-उ-मकार ।
पञ्चाक्षर सब मूल मंत्र पद वाचक परमेष्ठी ॐकार ॥ २१ ॥
ॐकार ध्वनि स्याद्वाद मय जामें सर्व तत्व उपदेश ।
विश्व तत्व विज्ञान प्रकाशै वन्दि ध्यान धरौं वेद जिनेश ॥ २२ ॥
जो अन्यूनक अनतिरिक्त अरु याथा तथ्य विना विपरीत ।
विन सन्देह ज्ञान सम्यक्त्व हेतु शब्द मय वेद सुचीत ॥ २३ ॥
उस विज्ञानतें त्रिकाल विषयी लोकालोक द्रव्य गुण पर्याय ।
क्षेत्र भाव भव तिन बहु भेद को जानें वेद ज्ञानात्मक थाय ॥ २४ ॥
ॐकार संयुक्त आदि सब असिआउसा आदि जो मंत्र ।
ऋद्धि सिद्धि सुख शांति वृद्धि प्रद ध्यान करौं वन्दौं सब यन्त्र ॥ २५
सब हम को आदर्श रूप हैं उनके गुण हैं आचरणीय ।
सम्यक दर्शन ज्ञान चरित मय मारग मोक्ष धर्म शरणीय ॥ २६
तिन को पिण्डस्थ पदस्थ रूपस्थ रूपातीत निरन्तर ध्याय ।
पुरुषारथ सब सिद्धि करैं भवि योगी कर्म नाश शिव जाय ॥ २७
यह संक्षेप वचन परमेष्ठी मङ्गल रूप परम हितकार ।
अब विशेष वरनन तिनका सुनि समझो करौ सुजय चितधार ॥ २८
अर्थ प्रयोजन फल मङ्गल कहूं नामावलि गुरु श्री अरहान ।
बाधक कर्म घातिया नाशे यथा तथा गुण प्रकटे ज्ञान ॥ २९
मङ्गलमय अरु मङ्गल कारी परमातम वीतराग विज्ञान ।
शुद्ध स्वभाविक साधन कारि के हैं सबै अरहन्तादि महान ॥ ३० ॥
मङ्गल कारी मङ्गल करिकैं राखें आतम हितकर काज ।
याते सिद्धि है सब सनाज अरु पावें सत चित आनन्द राज ॥ ३१
सत परमातम तिन चेतनामय आनन्दमुख अनन्त अविकार ।

आतम को हित है सुख सोसुख आकुलता विन मोक्ष मझार ॥ ३२
जन्म जरा अरु मरण शोक भय वर्जित परमानन्द स्वरूप ।
बाधा रहित स्वतत्र स्वभाविक कहिये मोक्ष परम पद नूप ॥ ३३
मल विक्षेपावरण कर्म सब निर अवशेष निराकृत दोष ।
ज्ञान दर्श सुख बल अनन्त मय आतम शुद्ध स्वभाव सुमोष ॥ ३४
द्रव्य भाव नो कर्म बन्ध सब हेतु अभाव निर्जरा द्वार ।
कृत्स्न कर्म के विप्र मोक्ष तें मोक्ष परम पद है अविकार ॥३५॥
आतमोक निज राज मोक्ष है मारग प्राप्त उपाय सुजान ।
मिथ्या सरधा ज्ञान चरित वश ताको नहि पावै अज्ञान ॥ ३६
परम पूज्य ईश्वर परमातम् शुद्धातम पद वुहा सुजान ।
उसही की भवि करैं साधना चाहें जो आतम कल्यान ॥ ३७ ॥
परम ब्रह्म चैतन्य सिद्धपद परम इष्ट नेता परमेष्ट ।
समाहार समुदाय जो तिनका परमेष्टी है पञ्च पदेष्ट ॥ ३८ ॥
ॐकार ध्वनि तिनकी वाणी लोकालोक प्रकाशन हार ।
चिदानन्द शिव मारग दरशी बन्दौं तत्व ज्ञान भंडार ॥ ३९ ॥
चिदानन्द निज रूप अनूपम भूलो मिथ्या वश अज्ञान ।
आतम बुद्धि करि शरीरादि मे वातो काल अनादि प्रमान ॥ ४० ॥
जानें विन निज नाभि सुगधी मृग ज्यों भ्रमै चतुरदिश मांहिं ।
त्यों यह चेतनि भूलि निजानद आपहि भ्रमै चतुर्गति मांहि॥ ४१ ॥
तन धन यौवन त्रिया पुत्र सव अथवा नारक पशु नर वर्ग ।
सकल द्रव्य पर्याय अनन्ती भोगीं जानि चिदातम स्वर्ग ॥ ४२
द्रव्य क्षेत्र भव भाव काल पर सव जग ढूंढे वारम्बार ।
चिदानन्द निज शान्त ज्ञानमय पावै किम पर वस्तु मझार ॥ ४३
भ्रमत अर्द्ध पुद्गिल परिवर्तन किञ्चित न्यून रहै जब काल ।

अतिशय पुण्य प्रकृति भविपनतें पावें पञ्चलब्धि गुण माल ॥४४॥
देह निरोग आयु लहि दीरघ पावें उत्तम कुल अवतार ।
आर्य क्षेत्र पूरण इन्द्रिय मन पावें धर्म रुचा मय सार ॥ ४५
पाप प्रकृति अरु अशुभ भाव का उपशम क्षय क्षायोपशम होय ।
पुण्य प्रकृति शुभ भाव प्रघट होंय अरु कपायका उदय न होय॥४६॥
हित का ग्रहण त्याग अनहित का उपजै बुद्धि परम सुख दान ।
आतम हित अनुभव रुचि उपजै त्यागै मिथ्या सरधा ज्ञान ॥ ४७ ॥
देव धर्म गुरु सांचा जानैं त्यागै कुगुरु कुदेव कुधर्म ।
तत्वारथ सरधान करैं तब जानैं चिदानन्द निज मर्म ॥ ४८ ॥
तजि बहिरातम बुद्धि अनादी अंतर आतम है वडभाग ।
सतचित आनद नित निज ध्यावें सो परमातम होय वडभाग ॥४६॥
वीत राग विज्ञान भाव मय परणति परम शांत परिणाम ।
परम निराकुल नित परमानद तामें सत चित आनद नाम ॥५०॥
निज स्वभाव यह सरधैं जानैं अनुभव करैं योग थिर आन ।
या विन बंध मोक्ष याही तें निश्चय लहे परम कल्यान ॥ ५१
सम्यक दर्शन ज्ञान चरित मय वीत राग विज्ञान स्वभाव ।
मिथ्या सरधा ज्ञान चरित तजि प्रगट होय निज आतम स्वभाव ॥ ५२
सत चित आनद रूप मुक्ति सुख निर्विकार अविनाशी नन्त ।
नास्तिक वादी कहैं मुक्ति तें आवागमन निरन्तर सन्त ॥ ५३॥

## ( मङ्गल का अर्थ प्रयोजन तथा फल )

## और मूल वक्ता अरहन्त परमेष्टी का विशेष स्वरूप पाठ २

मङ्गलानयति पुण्यसुखजावें मगालयति गलावैं पाप ।
यातें मङ्गल नाम कहावैं पावैं सुख विनशैं सताप ॥ ५४ ॥

नास्तिकताके परीहार अरु शिष्टाचार प्रपालन हेत ।
कृति स्मृति गुरु रहैं निरन्तर मङ्गल करें विघन हर देत ॥ ५५॥
विस्व तत्व अस्तित्व अनादि भाषित ॐकार ध्वनि सार ।
तिन को नास्ति कल्पना मिथ्या भविजन नास्तिकता परिहार ॥ ५६
गुरु गुण भक्ति विनय कृति स्मृति आज्ञा पालन शिष्टाचार ।
प्रशम अरु संवेगानुकम्पा आस्तिकता गुण सम्यक धार ॥ ५७
प्रशम शांत परिणाम कहावै अरु संवेग पाप अनप्रीति ।
करुणा दया भाव अनुकम्पा- आस्तिकता सत्यार्थ प्रतीति ॥ ५८
श्रेय मार्ग तव सिद्धि अनादी होवै परमेष्ठी परसाद ।
यातें तिन-गुण करें वन्दना ऋषिगण धारें रीति अनाद ॥ ५९
अरहन्तादि पञ्च परमेष्ठी तिन मे प्रथम नमौं अरहन्त ।
वहिरन्तर मल कर्म घातिया नाशैं दोषावरण महन्त ॥ ६०
हित उपदेश प्रयोजन सव का तिन तें सधै विशेष प्रकार ।
गणधरादि आचार्य महा ऋषि सवके नेता परम उदार ॥ ६१
पुद्गल प्राकृत द्रव्य कर्म वहिरन्तर भाव कर्म तिन शक्ति ।
आत्म विकारी द्रव्य भाव कृत चारि घातिया घातक शक्ति ॥ ६२

( अरहन्त परमेष्ठी मे ही जगत गुरु पना सिद्ध करने वाले सत्यार्थ अनन्त चतुष्टय विशेष गुणों का तथा समान्य गुणों का उदय ॥ वीतरागता का उदय पाठ २ ॥)

अरु अरहन्त परम गुरु नाशैं कर्म यथा तथा आतम शक्ति ।
प्रगट होय वरनन तिनका अब उन भविक प्रवर्तावो शक्ति ॥ ६३

सन्मारग विपरीत निरन्तर निगोदादि दुःख सहैं अनन्त।
द्रव्य क्षेत्र भव भाव काल कौं परिवर्तन करि भ्रमण करन्त ॥ ६५
सन्मारग जिन मारग हित कर स्वानुभूति सम्यक्त कौं पाय।
भ्रमत भ्रमत संसार महावन प्रकृति भव्य पन उदयतैं भाय ॥ ६६
प्रकृति मिथ्यात्रय क्रोध मान माया लोभ अनन्तानुबन्धी भाय।
सात प्रकृतिका उपशम करि घरि नशि शुद्धातम झलकै भाय ॥ ६७
निज स्वरूप तत्वारथ सरधा स्वानुभूति रुचि सम्यक भाय।
सप्त प्रकृति उपशमतैं उपशम क्षायोपशमतैं क्षायोपशम भाय ॥ ६८
अरु क्षयतैं क्षायिक सम्यक होय दर्श मोह जब कर्म नशाय।
स्वानुभूति सम्यक्त विराजै केवल श्री अरहन्त सुखदाय ॥ ६९
चरित मोह इक बीस प्रकृति के उदय स्वरूप मे थिर न रहाय।
उपशम क्षायोपशमतैं काल कछु थिर क्षयतैं निश्चल थिरथाय ॥ ७०
चरित मोह उपशमतैं उपशम क्षायोपशमतैं क्षयोपशमभाय।
सम्यक चारित्र नाम कहावै क्षयतैं क्षायिक चारित्र थाय ॥ ७१
यों नशि प्रकृति चरित्र मोह सब निश्चल शुद्ध भाव विलसन्त।
क्षायिक चारित्र नाम कहावै निज स्वभाव मे निश्चल सन्त ॥ ७२

## ( सर्वज्ञता का उदय पाठ ४ )

मोह नाश करि वीतराग ह्वै क्षायिक सम्यक चारित्र वन्त।
बीति गए रागादि दोष सब वीत राग गुण अरहन् सन्त ॥ ७३
ज्ञानावरण उदय आतमकें जानन शक्ति प्रघट नहिं होय।
उस क्षायोपशमतैं क्षायोपशम प्रघट ज्ञान शक्ती कछु होय ॥ ७४
सो सब संसारी जीवन में अंश भेद हीनाधिक जोय।
इंद्रिय जनित परोक्ष यथा क्रम क्षायोपशम अनुसार सु होय ॥ ७५
ज्ञानावरण पंच विधि प्रकृती नशि प्रघटै केवल ज्ञानन्त।

द्रव्य क्षेत्र भव भाव काल सव जानैं लोकालोक अनन्त ॥ ७६
आतमा ज्ञान प्रमाण सिद्धि है ज्ञान सुनिश्चत ज्ञेय प्रमान।
लोकालोक समस्त ज्ञेय हैं ज्ञाता ज्ञान सर्व गत जान ॥ ७७
दर्शनावरण कर्म नव प्रकृति के उदय न अवलोकन सामान।
देखन दर्शन शक्ति न प्रघटे यातें महा दुखी जिय जान ॥ ७८
दृगावरण अठ कर्म प्रकृति के क्षायोपशमतें क्षयोपशम दर्श।
कछु इक देखन शक्ति प्रघट होय अरु क्षयतें होय केवल दर्श ॥ ७९
दृगावरण सब नव प्रकृती नशि प्रघटै केवल दर्श अनन्त।
सत सामान्य वस्तु सब लोकै क्षायिक केवल दृग अरहन्त ॥ ८०
लोकालोक द्रव्य गुण पर्यय क्षेत्र काल भव भाव अनन्त।
सब गत विश्व तत्व ज्ञाता दृष्टा धारैं गुण सर्वज्ञ अनन्त ॥ ८१
कर्म प्रकृति सब अन्तराय के उदयन—प्रघटै दानादिशक्ति।
यातें दान लाभ भोग उपभोग अरु वीरज दल उदय न शक्ति ॥ ८२
उनके क्षायोपशमतें प्रघटैं क्षायोपशम कछु दानादि शक्ति।
सो सब संसारी जीवन कें अंश भेद हीनाधिक व्यक्ति ॥ ८३

## ( परमहितोपदेशता का उदय पाठ ५ )

कर्म प्रकृति दानान्तराय के नाशैं दान शक्ति प्रघटन्त।
ज्ञान प्रकाशक शिवसुख साधक क्षायिक दान वचन अरहन्त ॥ ८४
कर्म प्रकृति लाभान्तराय के नाशैं लाभ शक्ति प्रघटन्त।
देहस्थिति कारण शुभ पुदिगल क्षायक लाभ स्वभाव अनन्त ॥ ८५
कर्म प्रकृति भोगान्तराय के नाशैं भोग शक्ति प्रघटन्त।
पुष्प वृष्टि गंधोदकादि बहु क्षायिक भोग शाति सुखानन्त ॥ ८६
उपभोगांतराय के नाशैं तिन उपभोग शक्ति प्रघटन्त।

करैं परीक्षा हेतु वाद तें निर्णय आप्तागम जिन धर्म।
समीचीन उत्कृष्ट सनातन शान्ति सुधा सुख साधन पर्म ॥ ९९ ॥
इन विशेष गुणतें सुपरीक्षा करें परम गुरु निश्चय होय।
गुण सद्भाव ते आप्त परम गुरु अरु अभाव तें कुगुरु,जोय ॥१००
अब सुनि आगम आश्रति जो गुण अरहन्तहि मे है निर्दोष।
सामान्य रागादि सदोषी कुदेवादि मे नहि निर्दोष ॥ १०१ ॥
है वे गुण सामान्य पने तें यातें उनतें परीक्षा नाहि।
गुण विशेषतें करि सुपरीक्षा दिव्य सत्य सामान्यहु थाहि ॥१०२॥
मिथ्या सरधा ज्ञान चरित तब करैं परीक्षा सब नशि जांय।
देव धर्म गुरु सत्यारथ की सरधा ज्ञान चरित प्रघटाय ॥ १०३ ॥

## ( दश केवल अतिशय पाठ ७ )

जिन प्रभाव इक दिश शत योजन नहिं दुर्भिक्ष कदाचित होय।
गगन गमन मुख चारि दीखते दर्शन करैं भविक जन लोय ॥१०४
नहि अदया उपसर्ग न कोई केवल करें न कवलाहार।
नयन पलक नहि लगैं कदाचित छाया रहित शरीराकार ॥ १०५॥
सब विद्या के ईश्वर कहिये जिनके नाहिं वढें नख केश।
केवल अतिशय दश यह अनुपम धारैं परमातम परमेश॥ १०६ ।

## ( आठ प्रातहार्य अतिशय पाठ ८ )

केवल अतिशय पुन्य उदय तिन आसन इन्द्र कम्पै सुरलोक।
मुकट नमैं स्वयमेव इन्द्रगण जानें केवलि कों दें धोक ॥ १०७।
सुर कुबेर चलि इन्द्राज्ञा तें रचना रचें अनेक प्रकार।
समवशरण वा गध कुटी की रचना अनुपम शोभाधार ॥ १०८
सब जीवन को शरण एक सम यातें समवशरण है नाम।

सभा केवली की अति सोहै मारग स्वर्ग मोक्ष सुखधाम ॥ १०९ ॥
है समथल तें कुछ इक ऊपर रचना शमवशरण सुखधाम।
चहुँ दिशि सीढी चढ़ि भवि जावें पहु चै समवशरण के धाम॥११०॥
इन्द्र नील मणि महा रतन है ताकी पृथ्वी गोलाकार।
चहुं दिश कोट वज्र मय खाई गोख कङ्गूरे तोरन द्वार॥ १११॥
विजय पूर्व पश्चिम वैजन्तर दक्षिण है जयन्त तिस द्वार।
अपराजित उत्तर दिशि राजै चहुं दिश अति सुंदर चतुद्वार॥११२
तिनके सनमुख मानस थंभतें मानिन मान गलित ह्वै जांय।
तिन समीप चैत्याले राजैं रतनमई जिन विम्ब सुहांय॥११३॥
कुंड सरोवर निर्मल जलके कमल खिले सोहैं सुखदाय।
सब ऋतुके फल फूल वनस्पति वन उपवन अति सुंदर भाय॥११४॥
तरु अशोक वन आम्र आदि वन छाया सघन अनेक प्रकार।
हंस मोर चकवो चकवा अरु कोकिल पंछी वहु परकार॥११५॥
शब्द रूप स्पर्श मनोहर कोमल अङ्ग सचिक्कन धार।
पञ्चेन्द्रिनकों आनन्दकारी शोभा अनुपम है सुखकार॥११६॥
फटिक शिला के बने चौंतरा शीतल शांति प्रकाशनहार।
तापर मंडफ सभा विराजै भवि जीवन कौं आनन्दकार॥११७॥
कल्पवासी भावन व्यन्तर अरु ज्योतिष देव मनुष तिर्यञ्च।
मुनि श्रावक अर्जिका श्राविका वैठैं निज निज सभा थिरञ्च॥११८॥
सुर नर पशु शत इन्द्रादिक सब आवैं भरैं पुण्य भण्डार।
पूजन भक्ति भाव दर्शन करि वैठें निज निज सभा मझार॥११९॥
सब के मधि है चन्द्र वेदिका कटनी त्रय सुन्दर सुखदाय।
तापर गंध कुटी सिंहासन विचित्र मणिमय शोभा भाय॥१२०॥
तरु अशोक सब शोक विनाशै ताके निकट सिंहासन सार।

तापर अंतरीक्ष कमलासन राजैं श्री जिन चन्द्र उदार ॥१२१॥
तिनके दिव्य परम औदारिक तनकी प्रभा मण्डलाकार।
भामण्डल तसु नाम कहावैं तामें अनुपम शक्ति अपार ॥१२२॥
सात जन्म पर्याय व्यवस्था भव जिय देखे अचरजकार।
पुण्य पाप फल जानि यथारथ साधैं आतमहित सुखकार ॥१२३॥
दिव्य वचन सद्धर्म प्रकाशै मारग स्वर्ग मोक्षदातार।
धर्मराज प्रभु नाथ त्रिलोकी कहिये जगजीवन आधार ॥१२४॥
तीनि छत्र सिर ऊपर सोहैं सूचक तीनि लोक हितकार।
पुष्प वृष्टि सुर करैं निरन्तर ढोरैं चमर यक्ष गणसार ॥१२५॥
दुंदुभि शब्द होय सुखकारी यातैं जय घोषण निर्धार।
प्रातिहार्य यह अष्ट अनूपम सरधा करैं तरैं संसार ॥१२६॥

( चौदह देवरचित अतिशय पाठ ९ )

मंत्रराज सरवज्ञ हितंकर वाणी तत्वज्ञान मयसार।
वीतराग विज्ञान प्रकाशै नाशैं मिथ्या मोह विकार ॥१२७॥
समीचीन उत्कृष्ट सनातन मारग जैन जैन हितकार।
सत्य दयामय धर्म हितंकर सरधा ज्ञान चरित बलकार ॥१२८॥
ता सुनि सब जिय करैं मित्रता त्यागैं जाति विरोध असार।
सिंह गाय मृग मूंष बिलावा वैठें एक स्थान सुखकार ॥१२९॥
हिंसा रहित सरलता धारैं वरतैं प्रेम भाव बहु प्यार।
सब जीवन में सत्य दयामय प्रेम शांति सुख अपरम्पार ॥१३०॥
निर्मल दिशाकाश अरु पृथवी दीसै दर्पण के अनुसार।
कंटक विन सब भूमि विराजै दीखै हर्ष मई ससार ॥१३१॥
मन्द सुगन्धी चलै पवन अरु वर्षे गंधोदक सुखकार।
यातैं सब जिय रहैं सुखारी बाधा रहित लखैं ससार ॥ १३२ ॥

चरन कमल तल रचै कमल सुर मुखतैं जय जय शब्द उचार।
धर्म चक्र आगे सुखकारी मङ्गल द्रव्य अष्ट परकार ॥ १३३ ॥
दुंदुभी शब्द होंय सुखकारी बोलैं जय जय शब्द अपार।
देव रचित चउदह यह अतिशय भवि जीवनकों आनन्दकार ॥१३४ ॥

## ( दश शुभ देहस्थ अतिशय पाठ १० )

दिव्य शरीर परम औदारिक सुन्दर रूप अनूपम जान ।
मल अरु मूत्र स्वेद तें वर्जित अङ्ग हैं परम सुगंधित वान ॥ १३५ ॥
वज्र वृषभ नाराच संहनन तिन तन याते पुष्ट महान ।
सम चतुष्क संस्थान जु यातें तन सुडोल अति सुंदर जान ॥१३६ ॥
लक्षण सहस्र आठ शुभ तन में प्रिय हित वचन अतुल बलवान ।
रुधिर श्वेत आकार अनूपम वरनन परमागम परमान ॥ १३७ ॥
जन्मत अतिशय चरम देह दश अनपवर्त्ति आयु तिन जान ।
शुभ देहस्थ सकल परमातम वन्दौं श्री अरहन भगवान ॥ १३८ ॥

## ( नाना देशों का उद्धार करने वाला विहार पाठ ११ )

सूक्ष्म क्रिया प्रतिपात शुक्ल जो तीजा सर्व भाव गत ध्यान ।
विन वितर्क वीचाररति सूक्ष्म धारैं काय योग भगवान ॥ १३९ ॥
विहायो गति नाम कर्म जो ताकी प्रकृति उदय अनुसार ।
शेष आयु पर्यन्त काल तक नाना देशों मे करै विहार ॥ १४० ॥
आप तरे भवि जीवन तारक तीरथ धर्म करैं विस्तार ।
मोक्ष मार्ग विज्ञान प्रकाशैं नाशैं मिथ्या मार्ग असार ॥ १४१ ॥

## (जिन अरहन्, जैन शब्दों का अर्थ तथा सम्बन्ध पाठ १२)

विश्वतत्त्व के ज्ञाता दृष्टा नाशैं मोह तिमिर अज्ञान ।
परम पूज्य परमेष्टी अरहन् सब के नेता गुरू महान ॥ १४२ ॥

पूज्य परम पद को प्रापति है कहलावैं अरहन भगवान ।
रागद्वेष छल लोभ आदि सब जीतें दोष सु जिनवर जान ॥१४३॥
नग्न स्वभाविक जिन मुंद्राक्ति सब जिय जन्में जगत प्रमान ।
यातें जैन जगत के प्राणी यथा जात जिन मुद्रावान ॥ १४४॥

## ( अरहन्त में ही जगत गुरूपना आदि पाठ १३ )

तुही जगत गुर तुही परम गुरु ब्रह्मा विष्णु हरी हर राम ।
शुद्ध बुद्ध जिन देव तुही है अथवा शिवशंकर गुणधाम ॥ १४५॥
तीर्थंकर तिलोक पती अरु वक्ता वेद यथारथ जान ।
महादेव सतदेव हितकर नेता जगनायक सरनाम ॥ १४६ ॥
जीवन मुक्त आप्त सतवक्ता आगम ईश धर्म वर नाम ।
परमातम साकार केवली ब्रह्म चिदातम सतगुरु नाम ॥ १४७॥
शुद्धातम उत्कृष्ट शरीरी धाता योगीश्वर भगवान ।
सुगत बुद्ध जगनायक नेता श्रेय मार्ग सुख शान्ति सुधाम ॥ १४८॥
निर्विकार निर्दोष निरंजन परमब्रह्म परमेश्वर नाम ।
पुरुषोत्तम सत पुरुष महेश्वर परमज्योति सरवज्ञ सुनाम ॥ १४६॥
खुदा गौड अल्लाह वा अकबर ईशू ख्रीष्ट मुहम्मद नाम ।
कुछ भी नाम कहो तुम उनका उक्त गुणों मे हो विश्राम ॥ १५० ॥
जगतनाथ जगदीश जिनेश्वर अरहन्तादि अनन्ते नाम ॥ १५१ ॥
जिसका ज्ञान दया का सागर परम शान्ति सुखदा उपदेश ।
सब जीवों की दया प्रकाशै पाप कर्म मल नशै कलेश ॥ १५२ ॥
राग द्वेष छल लोभ मोह अरु मिथ्या काम क्रोध है नाहिं ।
हांसि अरति रति चिंता निद्रा रोग शोक क्षुत तृष्ना नाहि ॥ १५३ ॥
राहे निजात मोक्ष मारग का नेता होवै उसे प्रणाम ।
पूरण ज्ञान दर्श सुख बल मय परम शांत अकलंक प्रणाम ॥१५४॥

जिसने कर्मघातिया नाशे ज्ञान पाय है आलिस गैब ।
उसही को हम करें वन्दना उक्त गुणों मे हो वेशेष ॥ १५५ ॥
उक्त गुणों की करें परीक्षा मिथ्या गुरु सरधान नशाय ।
देव धर्म गुरु सत्यारथ की सरधा ज्ञान चरित प्रघटाय ॥ १५६ ॥
कहो वीत निःशेष दोष सब पूरण ज्ञानी हैं अरहन्त ।
मोक्ष मार्ग नेता हैं वे ही करें परीक्षा गुरु जय सन्त ॥ १५७ ॥
यह संक्षेप कथन श्री अरहंत मङ्गल रूप आप्त हितकार ।
तिन विशेष गुण करि सुपरीक्षा आप्तानाप्त कहूं आगे धार॥१५८॥

॥ इति ॥

या प्रकार अरहन्त परमेष्ठी परम गुरु का स्वरूप
वरनन किया गया ।

परम गुरु अरहन्त आप्त और अन्य अनाप्तों की परीक्षा
करानेवाली।

# आप्त परीक्षा ।

भाषा छंद बद्ध।

## मङ्गलाचरण रूप वीत राग सर्वज्ञ परम हितोपदेशी जिनेन्द्र को नमस्कार।

ज्ञान ज्योति करि सब तत्वारथ जानैं श्री जिन चन्द्र उदार।
मोह ध्वान्त का नाश किया जिन तिनकौं वन्दौं बारम्बार ॥ १॥

## ( मङ्गलाचरण तथा मोक्ष मार्ग की सिद्धि )

श्रेय मार्ग संसिद्धि अनादी कहिये परमेष्ठी परसाद।
यातैं तिन गुण करैं वन्दना आदि मध्य अवसान गणाद ॥ २॥

## ( मोक्ष मार्ग के नेता आप्त का लक्षण )

मोक्ष मार्ग के नेता कहिये नेता भूभृत कर्म सुजान।
बिश्व तत्व के ज्ञाता कहिये वन्दैं तद्गुण लब्धिमहान ॥ ३॥

## ( यह लक्षण साँचे आप्त ही में हैं मिथ्या में नहीं हैं )

उक्त विशेषण असाधार सब साँचे आप्तहि मे सरधान।
पर संकल्पित आप्तनमे नहिं सबमे व्यवच्छेद तिन जान ॥ ४॥

## (यह लक्षण अनाप्तों में न होने से आप्त ही मोक्ष मार्ग नेता हैं)

अन्य भे योग के व्यवच्छेद तें साचा आप्तहि निश्चय होय।
उस ही के उपदेश उदय करि मारग मोक्ष प्रवर्तित होय ॥ ५॥

( शंका ) मुनीन्द्र कर्मों को नाश नहीं कर सकते ।

र्म रूप पर्वत का भेद न है मुनीन्द्र के सम्भव नांहिं ।
सा कहैं विपर्यय तिन प्रति हम यहा कहैं सु धरि चित मांहिं ॥६॥

( समाधान ) शंका करने वाले ने स्वयं सर्वज्ञ माना है ।

नके प्रथम प्रमाण सिद्धि है ज्ञाता सर्व तत्व सर्वज्ञ ।
दा बाधकाभाव सर्वतें स्वय सुखादिक त्यों सर्वज्ञ ॥ ७ ॥

( वह सर्वज्ञ कर्मों के दोषावरणों के नाश से ही सिद्धि हो सक्ता है अन्य प्रकार नहीं )

ज्ञाता है विश्व तत्व का भेता भूभृत कर्म है सोय ।
विधि नहिं तो नांहिं अन्यथा ज्ञाता विश्व तत्व किम होय ॥८॥

इसका अनुमान प्रमाण है कि सब आत्मा कर्म सहित हैं और बिना उपाय के कर्मों का नाश नहीं ।

र्म रहित नहिं कोय शाश्वता दीखे विश्व जगत के मांहिं ।
न उपाय तिन सिद्धि न सम्भव आगें और कहें तिन माहिं ॥९॥

( पुनः शंका अनादि सर्वज्ञ बिना नेता सम्भव नहीं )

सिद्धि अनादि बिना नहिं होवे नेता मोक्ष मार्ग का कोय ।
उसकी सर्वज्ञ तें सिद्धी किहि विधि, सहै परीक्षा सोय ॥ १० ॥

पुनः समाधान तथा निराकार में नेतापन असम्भव है)

न्य मुक्त सम बिन शरीर के नेता मोक्ष मार्ग का नाहिं ।
हित शरीर कर्म बिन कोई सम्भव अज्ञ जंतुवत नांहिं ॥ ११ ॥

( कर्मों के नाश होने पर इच्छा का अभाव सिद्धि होता है। )

कर्माभाव तें इच्छा शक्ति हू है ईश्वर के सम्भव नाहिं।
यह इच्छा अव्यक्त व्यक्त वा किरिया हेतु अज्ञ सम नाहि ॥१२॥

( इच्छा के अभाव में कर्तापन सिद्ध नहीं हो सकता )

सर्व कार्य करने समरथ है ज्ञानहि शक्ति ईश की एक।
यह कहना अनुमान सिद्धि नहिं दीखे उदाहरण नहिं एक ॥ १३ ॥

( इस पर वादी का उत्तर तथा जिनेन्द्र का दृष्टाँत )

यथा जिनेश्वर विन इच्छा ही वक्ता परमागम तुम ईश।
त्यों इच्छा विन सर्व कार्य का कर्ता सिद्धि है वह जगदीश ॥१४॥

( उसका खंडन तथा नेतापन का हेतू )

अतिशय पुण्य प्रकृति तीर्थंकर धारें धर्म विशेप प्रकार।
यातै मोक्ष मार्ग जिन नेता नाहीं ज्ञान मात्र तें यार ॥ १५ ॥

( सब कर्मों के अभाव में वचन संभव नहीं तीर्थंकर प्रकृति ही वक्ता पन की हेतू है )

सब कर्मो के नाशपने तैं वचनहिं सम्भव मुक्तन मांहि।
विना प्रकृति तीर्थंकर नामा हित उपदेश सम्भवै नांहि ॥ १६ ॥

( ईश्वर में भी यदि धर्म विशेप तीर्थंकर पना है तौ देह भी माननी होगी )

यदि शाश्वत अस्तित्व योगतें है ईश्वर मे धर्म विशेप।
तौ योग्यन्तर सम ईश्वर कें हुइ हैं उत्तम देह विशेष ॥ १७ ॥

( देह रच कर अवतार लेने में दोपापत्ति )

दुष्टन नाशन भक्तन पालन रचि निज देह लेइ अवतार।
या विधि कथन न सहै परीक्षा आगें सुनो सकल विस्तार ॥ १८॥

( अन्य देह विना देह रचने से विना देह भी कार्य होने से देह रचना व्यर्थ )

अन्य देह विन रचै देह निज जो ईश्वर कर्त्ता तुम भ्रात।
तो विन देह करै सब कारज देहाधान अनर्थक जात ॥ १६ ॥

अन्य देह से देह रचने पर अनवस्था दोप तथा त्यों ही कार्यों का होना ईश्वर कर्ता असम्भव।

अन्य देह तें रचै देह निज या विधि अनवस्था लगि भ्रात।
देहादिक सब कार्य इसी विधि किहि विधि कर्ता ईश्वर जात ॥२०॥

( स्वयं देह रच जाने पर त्योंही कार्यों का होना )

स्वयं देह रचि जाय ईश्वर की तो क्या कारज सम्भव नाहि।
उक्त कार्य ईश्वर हेतुक ते क्यों व्यभिचार दोप है नाहिं ॥ २१ ॥

( संसारी जीवों के समान उसके देह के होने पर दोप का निवारण )

यथा अनीश देह निज उत्पति मानें देहान्तर तें जात।
पूर्वापूर्व अनादि पने तें सम्भव अनवस्था नाह भ्रात ॥ २२ ॥

( संसारी जीवों में कर्म देह की संतान अनादि सिद्ध होने से ईश्वर में भी सम्भवता। )

कर्म देह सतान अनादी है अनीश कें निश्चय भ्रात।
त्यों सकर्म ईश्वर किम नाहीं इसमे न्याय दृष्टि करि जात ॥ २३ ॥

**( कर्मदेह की संतति सिद्ध होने से ईश्वर में अनीशता )**

तथा ईश की पूर्व देह तें कहते देहान्तर उतपात।
नहिं अनवस्था तब अनीशता निश्चय ईश्वर मे ठहरात ॥ २४ ॥

**( अनीशता दोष से ईश्वर के देह तथा तीर्थंकर पने का अभाव )**

उक्त दोष के सम्भवपन तें ईश्वर के है देह न भ्रात।
देहाभाव विरोधपने तें धर्म विशेषहु नहि ठहरात ॥ २५ ॥

**( तब इच्छा बिना कार्य में प्रवर्तन सिद्ध नहीं। )**

यों इच्छा बिन कार्य प्रवर्तन ईश्वर का नहि संभव जात।
नहिं जिनेन्द्र सम उदाहरण भी सम्भव घटता दीखै भ्रात ॥ २६ ॥

**( शरीर रहित ईश्वर का ज्ञान नित्य कहने पर उस कृत कार्य प्रमाण होने से विरोध ठहरता है। )**

अशरीरी ईश्वर का ज्ञान तुम कहते नित्य रहित क्रम जोय।
तो क्रम रहित ज्ञान कारण तें कारज क्रम विरोधता होय ॥ २७ ॥

**नित्य ज्ञान कारण से अनित्य कार्यफल नहीं हो सकता तथा अनित्य ज्ञान से नित्य मत का क्षय होता है।**

ज्ञान नित्य कारण प्रमाण उस तो अनित्य फल कार्य न होय।
फल अबोध वा अनित कार्य फल इष्ट कहै मत नित क्षय होय ॥२८॥

**फल रूप ज्ञान नित्य असिद्ध है फल कार्य की उतपत्ति विना फल का अभाव सिद्ध होता है।**

फल स्वरूप जो ज्ञान नित्य है तो अनुमान तें सिद्धि न होय।
बिन उतपत्ति कार्य फल कैसें ठहरै फलाभाव पन सोय ॥ २९ ॥

ईश्वर का अनित्य ज्ञान व्यभिचारी है वह अनित्य ज्ञान कार्यों का साधन नहीं हो सक्ता।

अनित्यपने है ज्ञान ईश तो वह व्यभिचारी है स्वयमेव ।
कार्यपनादि का वह साधन नहिं जो अनित्य बुधि है स्वयमेव ॥३०॥

अन्य बुद्धि से करण बुद्धि में अनवस्था और कर्म संतति विना ज्ञान संतति की असंभवता।

बुद्ध्यन्तर तें करण बुद्धि की उत्पति अनवस्थिति ठहराय।
विन सतान कर्म के मानें किह विधि संतति ज्ञान लखाय ॥ ३१ ॥

सर्व व्यापक ज्ञान विना सर्वत्र कार्य की असंभवता ।

ज्ञान ईश का जो नहिं व्यापी तब क्यों करि यह सम्भव होय ।
ईश्वर कृत सर्वत्र कार्य की है उत्पत्ति न सम्भव जोय ॥ ३२ ॥

जो ज्ञान एक देश में रहते सर्वत्र कार्य कृत है तो सर्वत्र युगपत कार्य होना चाहिए।

जो एकत्र देश में स्थिति है सर्वत्र कार्यकृत ज्ञान ।
तो सर्वत्र कार्यकृत उसके क्यों सम्भव नहिं उत्पति वान ॥ ३३ ॥

अन्य कारण के अभाव से कार्य का न होना है तो अन्य कारण ही हेतु ठहरेगा।

अन्य कारणाभाव पने तें कारज होय न नित सर्वत्र।
तो ज्ञानेश्वर कार्य हेतु नहिं कारण अन्य सदा सर्वत्र ॥ ३४ ॥

अन्वय व्यतिरेक ईश्वर में सिद्ध न होने से ईश्वर कार्यों का हेतू नहीं है।

विन अन्वय व्यतिरेक न सम्भव कारज ईश में नित सर्वत्र।
कारण अन्य रहे सब कारज होवैं तिस हेतुक किमि अत्र॥

---

जिस कारण के होतें कार्यविशि होय अन्वय सो जानो भाय ।
जिस कारण विन कार्य कदापि न होय व्यतिरेक सुजान भाय॥२५॥
यों व्यापक सर्वत्र सर्वदा ईश्वर ज्ञान तुम्हारा भाय ।
त्यों सर्वत्र सर्वदा कारज क्रम हेतुत्व हांनि तें थाय ॥ ३६ ॥

## निज पर सर्व के जानै विना सर्वज्ञ असम्भव है ।

ईश्वर ज्ञान न आपा जानै तौ सर्वज्ञ सम्भवै नाहि ।
निज पर सर्वतत्व विन जानै वह सर्वज्ञ सम्भवै नाहि ॥ ३७ ॥

## अन्य ज्ञान तें पूर्ण ज्ञान का जानने से अनवस्था दोष प्राप्त होता है ।

अन्य ज्ञानतें पूर्व ज्ञान कौं जानैं पूर्व पूर्व या भांति ।
यों सर्वज्ञ कहें अनवस्था ठहरै दोष महा या भांति ॥ ३८॥

## निज पर जानने वाला अति पूर्ण अनादि ज्ञान मानने पर ईश्वर को ही निज पर ज्ञाता मानना चाहिये ।

या विधि एक ज्ञान अति पूरव मानें निज पर जानन हार ।
तौ प्रथमहि ऐसा किन मानो ईश्वर निज पर जानन हार ॥ ३९ ॥

## ज्ञान सर्वथा भिन्न मानने पर वह ईश्वर का ही क्यों हैं आकाश का क्यों नहीं है ।

है स्वारथ व्यवसाय आतमक ज्ञानेश्वरते सर्वथा भिन्न ।
तौ वह ज्ञान ईश ही का क्यों आकाशादि वदंजस भिन्न ॥ ४० ॥

## समवाय से ज्ञान है तो भिन्न कहना असम्भव हैं यह यहां है इससे व्यभिचारी ठहरता है ।

है समवाय करि ज्ञान ईश मे तो कैसे गति उसकी भिन्न ।

वह यां ईश्वर मे विज्ञान तें हैं अवाध व्यभिचारी भिन्न ॥ ४१ ॥

इस कुन्डे में दही है इस प्रकार साधन में सम्बन्ध मात्र से साधन मानने पर भिन्नता है सो समवाय से भिन्नता सिद्धि नहीं होती ।

इस कुन्डे मे दधि इत्यादिक विज्ञान तें हैं उस विद्वेष ।
है साध्य मे सम्बन्ध मात्र में परकें साधन सिद्धि तें द्वेष ॥ ४२ ॥

मिश्रों में समवाय सिद्ध नहीं इस कारण शास्त्र विरोध है।

अयुत सिद्धि मे जो समवाय है यह नहिं साधु विशेषण भाय ।
समवायिन की अयुत सिद्धि भी तुम शास्त्रन में नाहिं लखाय ॥४३॥

अपने २ अवयव आधार द्रव्य और द्रव्याश्रय गुण लौकिक भिन्नता है तो जल और दूध में भी माननी होगी ।

निज अवयव आधार द्रव्य है अरु गुण द्रव्याश्रय निर्धार ।
लौकिक अयुत सिद्धि तें मानौ तब जल दुग्धहु मे निर्धार ॥ ४४ ॥

तब अन्य की पृथक् आश्रय वृत्ती और ईश्वर और ज्ञान की अभिन्नता सिद्धि नहीं होगी ।

अन्य की पृथगाश्रय वृत्तीपन युत सिद्धी तब नहिं ठहराय ।
है वह ईश की विभूपने करि पर द्रव्याश्रित च्युत तें भाय ॥ ४५॥

तब ज्ञान की ईश्वर से भिन्नता द्रव्य वृत्तिपन की हानि से ठहरेगी इसी प्रकार अन्य समानों की भी ठहरेगी ।

ज्ञान की भी ईश्वर तें अन्य है द्रव्य वृत्ति पन हानि तें भाय ।
यह जिनमें भी समान ठहरे तिनकी भी पर्यनुयोग है थाय ॥ ४६ ॥

**विभू द्रव्य विशेषों की अभिन्नता अन्य आश्रय से है तब एक द्रव्य गुण आदि की युत सिद्धी क्यों नहीं है।**

युत सिद्धा विभु द्रव्य विशेषों को अन्याश्रय विवेक तें भाय।
तब वह युत सिद्धो किम नाहो एक द्रव्य गुण आदि मे भाय॥ ४७॥

**यों अभिन्नता भिन्नता रूप समवाय के सत्व में परस्पर व्याघात है।**

हैं युत सिद्धयरु अयुत सिद्धि भी यों समवाय परस्पर भाय।
तिनके दोनों के जु सत्व मे हैं व्याघात दुरुत्तर भाय॥ ४८॥

**संयुक्तपन से अभिन्नता मानने पर व्यापक-द्रव्य गुण आदि की भी अभिन्नता ठहरेगी।**

है संयुक्त पने हेतू तें जो युत सिद्धि तुम्हारे भाय।
व्यापक द्रव्य गुणादिकहू की युत सिद्धी सम आगत थाय॥ ४९॥

**यों भिन्नता और विशेषण सिद्ध न होगा और हेतु की विपक्षता से व्यवच्छेद को साधन नहीं करेगा।**

या विधि अयुत सिद्धि सम्भव नहिं अरु तुम सिद्धि विशेषण नाहि।
प्रथम हेतु की विपक्षता तें साधै व्यवच्छेद सो नाहिं॥ ५०॥

**समवाइयों में देखने से समवाय है तो यह यहां है इस वित्ती से साधन व्यभिचारी ठहरता है।**

जो समवाय सिद्धि भी मानैं देखनतें समवायिन माहिं।
यह यहां है या विधि संविति तें साधन व्यभिचारी वह थाहिं॥५१॥

**समवायियों में समवाय की अन्य समवाय से वृत्ति है तो परस्पर समवाय अनंत और अनवस्था दोष ठहरेगा ।**

समवायिन मे जो समवायका है समवाय अन्यतें वृत्ति ।
तो समवाय अनन्त परस्पर ठहरैं अनवस्था तसु वृत्ति ॥ ५२ ॥

**तब विशेषण बाधा सहित अनैकान्तिक हेतू दूषित ठहरता है ।**

बाधा सहित विशेषण यातें बाधा रहित न सम्भव होय ।
या विधि अनैकान्तिक हेतू दूषित सिद्धि न सम्भव होय ॥ ५३ ॥

**यह यहां है इससे विशेषण और विशेष्यता है तो तद्वत में समवाय की सिद्ध नहीं है ।**

जिनकें यहां यह विज्ञानतें है विशेषणरु विशेष्यता भाय ।
समवाय की तद्वन मे वह नहिं होवें सिद्धि यह निश्चय थाय ॥
ज्ञान ईश समवाय विशेषण अरु विशेष्य सम्बन्ध स्वरूप ।
तौ समवाय विशेष्य रूप ही ठहरें नाहिं अन्यथा रूप ॥ ५४ ॥

**जो विशेषण विशेष्य संबंध अन्य से है तो निज संबंधियों के साथ उक्त प्रकार अनवस्था दोष ठहरेगा ।**

है जुविशेषण विशेष्यत्व का वह सम्बन्ध अन्यतें भ्रात ।
तौ अनवस्था दोष उसी विधि आवै निज सम्बन्धिन साथ ॥ ५५ ॥

**जो प्रत्ययतें विशेषण और विशेष्य है तो भी दूषित है ।**

जो प्रत्ययतें है सुविशेषण अरु विशेष्य तब दोष न थाय ।
है विशेषणरु विशेष्यपन यह या विधि करि भी दूषित भाय ॥५६॥

## उसमें भी अनवस्था दोष है।

उसकी अनन्त्य तें प्रपत्री के:आकांक्षा/क्षयतें भी भाय ।
है समवाय आदिक करि किम नहिं ठहरें दोष यहां भी भाय ॥
वे अनन्त सम्बन्ध कहावैं आकांक्षा वा क्षय तें भी भाय।
याते वे निर्दोष कहावैं तव अनवस्था अवशि लखाय ॥ ५७ ॥

## द्रव्य गुणादिक की सर्वथा भिन्नता मानने से अनेक दोषापत्ति हैं।

द्रव्य गुणादिक भिन्नि हैंजिन कें अरु हैं द्रव्य परस्पर भिन्नि ।
सिद्धि विशेषण विशेष्यत्व का है सम्बन्ध निरङ्कुश भिन्नि ॥५८॥

## संयोग अरु समवाय सर्वथा स्वतंत्र कहने पर अनेक दोषापत्ति है।

संयोग अरु समवाय जु तिनकें हैं विशेष भी नेक प्रकार।
स्वातंत्रय समवाय सर्वथा मानै दोष अनेक प्रकार ॥ ५९ ॥
जौ आश्रित सम्बन्धिन केहैं तौ किम स्वातंत्रय समवाय।
उसके आश्रितपन के वचन मे स्वातत्रय प्रतिहन्य कहाय ॥ ६० ॥
समयायिन मे भयें सुनिश्चय समवाय के वेदन्तों भाय।
आश्रितपन मे दिग आदिक कैं मूर्त द्रव्य आश्रित्त किन थाय ॥६१॥
है समवायिनहीं के आश्रय जौ समवाय स्वतंत्र तुम्हार।
तौ आश्रित पन तें किम नाहीं दिश आदिक द्रव्यन आधार ॥६१॥

## सर्वथा सम्बन्ध अनाश्रित मानने में नियम स्थिती की असंभवता।

जौ सनवन्ध-अनाश्रित सव विधि तप किह करि ये सम्भव होय।
जा करि निज सनवन्धिन्न ही मे तिसकी नियत स्थिती होय ॥६२॥

## सर्वत्र एक समवाय मानने में ज्ञान की आकाश में भी व्यापी ठहरेगी ।

जो सर्वत्र एक ही मानें वह समवाय तुम्हारे माय ।
है समवाय तें ज्ञान ईश में वह आकाश में किन कहलाय ॥ ६३ ॥

## हेतु व्यापक के बिना मानें प्रत्यक्ष में शंकर दोष की उभय आत्म की आपत्ति ।

या विधि वह प्रत्यक्ष भी शंकर ईशाकाश में सिद्धि कहांहि ।
या विधि भेद सिद्धि क्यों कर है व्यापक बिन मानें तुम नाहिं ॥६४॥

## व्यापक बिना अचेतनता भी ईश में सिद्ध नहीं है यदि है तो ईश और आकाश में अन्तर ही क्या है ।

और अचेतनता व्यापक हू सम्भव तुम ईश्वर में नाहिं ।
जो सम्भव तो नहिं विशेषता ईश्वर आकाशादिक माहिं ॥ ६५ ॥

## ईश स्वयं ज्ञान का ज्ञाता या अज्ञाता नहीं ठहरता । ज्ञान के समवाय से ज्ञाता मानने पर वह स्वतः आत्मा ही क्या है ।

ईश न ज्ञाता अज्ञाता नहिं स्वयं ज्ञान का केवल सत्व ।
ज्ञान के समवाय तें जो ज्ञाता स्वतः आतमा क्या वह तत्व ॥ ६६ ॥

## ईश स्वयं आतमा या अनात्मा न होने से स्वतः द्रव्य सिद्ध नहीं होता ।

स्वयं आतमा नहिं अनात्मा आतम पन समवाय तें तत्र ।
सदा आतमा ही जो ईश्वर तो है द्रव्य अभिन्य स्वयमेव ॥ ६७ ॥

ईश स्वयं द्रव्य वा अद्रव्य न होने से समवाय से स्वतः
सतरूप प्रसिद्ध नहीं होता।

ईश द्रव्य नहिं अद्रव्य हू नहिं द्रव्यपना समवाय तें एव।
सदा द्रव्य ही जो ईश्वर है तौ सतही नहिं वह स्वयमेव ॥ ६८ ॥

ईश स्वयं सत वा असत न होने से समवाय से सतपना
है अथवा सत ही है तौ व्याघात दोष आता है।

ईश्वर सत नहिं स्वत असत नहिं, सतपन है समवाय तें एव।
जे सत ही शाश्वत तुम मत में किम व्याघात निवार करेव ॥६९॥

जो समवाय से सतपना है तो स्वरूप से असत है तब
आकाश पुष्प में सतपना क्यों नहीं है।

जो समवाय तें सतपन मानो तो स्वरूपते असत सुजान।
पुष्पाकाश में सतपन किम नहिं तिन विशेष है उभय समान ॥७०॥

इस कारण स्वरूप से ही सतपना है समवाय से नहीं
समवाय में भी नित्य सत्व है और सामान्य आदि में भी
नित्य सत्व है।

द्रव्य आत्मा ज्ञाता आदि का द्रव्यपना आदि स्वतः प्रमान हैं-यदि नहीं हैं तो समवाय भी स्वतः प्रमान नहीं हो सकता।

द्रव्य आतमा अरु ज्ञाता का द्रव्यत्वादिक स्वत. प्रमान।
जो वे स्वत सिद्ध नहिं मानो तो समवाय न स्वत. प्रमान ॥७३॥

यों ज्ञान का ज्ञाता पना महेश के समवाय करि सिद्ध नहीं है स्वतः सिद्ध है।

ज्ञान का ज्ञातापन महेशके समवाय करि नहिं सिद्धि प्रमान।
तब महेश का स्वत ज्ञातपन विन समवाय है स्वत प्रमान ॥७४॥

स्वारथ व्यवसाय आत्मिक ज्ञान ईश तादात्म्य स्वरूप सिद्ध है तब जिनेशपना ईश में संशय रहित किसी अपेक्षा सिद्ध है।

है स्वारथ व्यवसाय आतमक ज्ञान ईश तद्रात्म्य सुभाय।
तब जिनेशपन सिद्धि ईश के संशय रहित कथंचित भाय ॥७५॥

वुही मोक्ष मार्ग प्रणेता है अन्य प्रकार नहीं है। मोह अज्ञान नाश करने वाला वीतराग सर्वज्ञ भी वुही है जीवन मुक्त शुभ देहस्थ तीर्थंकर भी वुही है।

वुही मोक्ष मारग का नेता 'नाहिं' प्रणेता अन्य प्रकार।
मोह नाशि सरवज्ञ शरीरी धारें धर्म विशेष प्रकार ॥७६॥

वीतराग सर्वज्ञ परमहित उपदेशी गुण विना कोई भी देह सहित वा रहित शिव–कपिल–ब्रह्मा–विष्णु–महेश–कृष्ण–ईश–अग्नि–वायु–आदित्य–अङ्गिरा–बुद्ध–आदि मोक्ष मार्ग नेता संभव नहीं हो सक्ते।

रहित ज्ञान विन देह से देही मारग मोक्ष प्रणेता नांहि।
शिव कर्त्ता उपदेश न सम्भव भेत्ता भूभृत कर्म सुनाहि ॥७७॥
याविधि कपिलहु नांहि प्रणेता मारग मोक्ष तुम्हारा भाय।
स्वत ज्ञान के रहित पनेतें नहि विशेषता तिस ठहराय ॥७८॥

ज्ञानके मिलाप से ज्ञातापना तत्वरूप से अज्ञान समान है इस कारण चेतना कें आकाश के समान वक्तापन नहीं ठहरता।

ज्ञान के संसर्ग तें ज्ञातापन तत्वपनें अज्ञान समान।
व्योम समान चेतना कें भी वक्ता पन नहिं मुक्त समान ॥७९॥

जौ ज्ञान के संसर्ग से ज्ञाता पन है तो प्रधान प्रकृति कें भी वीतराग पना सर्वज्ञ पना और मोक्ष मार्ग नेता पन सिद्धि ठहरैगा।

ज्ञान पने तें तव प्रधान भी मारग मोक्ष प्रणेता भाय।
उस हीं कें सर्वज्ञपना अरु भेता भूभृत कर्म सुथाय ॥ ८० ॥

सो अचेत पनेतें पट आदि के उस प्रधान कें सम्भव न हौने से पुरुष का कथन मिथ्या तथा निष्फल ठहरता है।

अचेत पन तें वे पटादि वत उस प्रधान कें सम्भव नाहि।

पुरुष कथन मिथ्या निष्फल है अन सम्भवतें प्रधान के माहि ॥ ८१ ॥

जो वुही आत्मा कर्त्ता और भोक्ता विरोध रहित सिद्ध है तो भोक्ता और भुगाने वाला कर्ता विरोध रहित सिद्ध नहीं हो सकता ।

वुही आतमा कर्त्ता भोक्ता जो अविरोधपने है सिद्धि ।
तो भोक्ता अरु भुगाने वाला कर्त्ता नहिं विरोध तें सिद्धि ॥ ८२ ॥

जो मुमुक्षु पुरुष प्रधान मोक्ष मार्ग नेता को स्तुति करते हैं तो अन्य कौन किस आत्मा का उपासक हो सकता है ।

मोक्ष मार्ग नेता प्रधान को स्तुति करते पुरुष मुमुक्षु ।
या विधि कहते अन्य कौन किस आत्म उपासक पुरुष मुमुक्षु ॥८३॥

सुगत बुद्ध भी क्षणिक ज्ञान वाला वीतराग सर्वज्ञ परम हित उपदेशी नहीं हो सकता ।

सुगतहु मोक्ष मार्ग नेता नहिं संम्भव ओधमती तिन मांहि ।
विरत्र तत्व ज्ञाता सम्भव नहिं तत्वपने कपिलादिव नाहि ॥ ८४ ॥
विश्व तत्व ज्ञाता अरु वक्ता मारग मोक्ष संवृती रूप ।
बुद्ध न वंद्य ज्ञान स्वप्न सम धारैं अज्ञ चेष्टा रूप ॥ ८५ ॥

संवेदन अद्वैत पुरुष भी उक्त गुण रहित नेता सम्भव नहीं ।

संवेदन अद्वैतन नेता वह अद्वैत पुरुष सम थाहि ।
स्वत. अन्यत इष्ट सिद्धि है स्व इष्ट हानितें मानतें नाहि ॥ ८६ ॥

वह अरहन्त ही उक्त गुण वाला नेता प्रमाण सिद्ध को वन्दने योग्य है ।

वह अरहन्तहि योग्य वन्दने ऋषि गण ईश प्रणेता जान ।

बाधा रहित प्रमाण सिद्धि है सो निश्चय सब करैं प्रमाण ॥८७॥

**सूक्ष्म आंतरित दूर वर्ती पदार्थ सब उसी के प्रत्यक्ष हैं अन्य के नहीं।**

उसही के अन्तरित तत्व सब हैं प्रत्यक्ष त्रिकालकनन्त ।
प्रमेयत्वतें यथा हमारें हैं प्रत्यक्ष सुनिश्चय संत ॥८८॥
दूरारथ मन्दिर आदिकतें हेतू व्यभिचारी है नाहिं ।
परमाणू आदिक सूक्ष्म करि तिनके पक्षी कृतपन माहिं ॥८९॥

**दूरार्थ सुदर्शन मेरु आदि आँतरितार्थ राम रावणादि सूक्षम परमाण आदि की अपेक्षा हेतू व्यभिचारी नहीं है।**

देश काल अरु स्वभाव पनतें हैं अन्तरितत्व सब जानि ।
निश्चय धर्मादिक जिनेश कें हैं प्रत्यक्ष सिद्धि सो मानि ॥९०॥

**हमारे समान पराधीन प्रत्यक्ष पना नहीं हैं उनकें स्वतंत्र प्रत्यक्ष पना है।**

हम समान प्रत्यक्ष पना नहिं विन सहाय तिन सकल प्रत्यक्ष ।
दोनों के नहिं विवाद सम्भव यातें भेद पना प्रत्यक्ष ॥९१॥

**प्रमेयपना हमारे भाग रूप हैं उनकें समस्त पने से हैं क्यों कि अप्रमेय वस्तु सिद्ध नहीं हो सकती।**

है असिद्ध नाहिं प्रमेयत्वतिन भाग समस्त पनें प्रत्यक्ष ।
नाहिं सर्वथा अप्रमेय की वस्तु व्यवस्था सिद्धि प्रत्यक्ष ॥९२॥

**जो छै प्रमाणों करि सर्व पदार्थ सिद्धि हैं तो सर्वज्ञ भी सिद्धि हैं जो सर्वज्ञ नहीं हैं तो शेष पदार्थ भी सिद्ध नहीं हो सकते।**

छै प्रमाण करि सिद्धि पदारथ तो सर्वज्ञ सिद्धि परमेय ।
जो सरवज्ञ सिद्धि नहिं या विधि तुम शेषारथ नहिं परमेय ॥९३॥

## जो सर्वथा प्रेरणा से सबका ज्ञान होता है तो अन्तरितार्थ का ज्ञान क्यों नहीं होता ।

विश्व पदारथ ज्ञान सर्वथा जो प्रेरण करि सम्भव होय ।
तौसमक्षवत प्रेमयत्वतें अन्तरितारथ सिद्धिहु होय ॥६४॥

## जो अरहन्त के प्रत्यक्ष नहीं हे तो वहिर्गत प्रमेय भी सिद्ध न होंगे ।

जो समक्ष अरहन्त के नांहो तो प्रमेयगत वहिरहु नाहि ।
मिथ्यैकान्त कल्पना या विधि निश्चय व्यतिरेकहु के माहि ॥६५॥

## व्यतिरेक अन्वय हेतु करि ही सिद्ध है इस कारण अरहन्त ही विश्व तत्व का ज्ञाता हैं ।

है निश्चय व्यतिरेक पना भी अन्वयहेतु प्रसिद्ध प्रमान ।
ज्ञाता अरहन विश्वतत्व का या विधि सिद्ध अवाधित जान ॥६६॥

## त्रिलोकवर्ती त्रिकालक पदार्थ युग पत प्रत्यक्ष विश्व ज्ञाता के विना अन्य के सम्भव नहीं हो सकते ।

तीनि भुवन अरु तीनिकाल के विन परिछंद सकल प्रत्यक्ष ।
रहित विश्व ज्ञाता सम्भव नहिं निश्चय बाधक सिद्धि प्रत्यक्ष ॥६७॥

## विश्व तत्वरूप विपय के सद्भाव से उसका विपयी विश्व ज्ञाता असिद्ध नहीं हो सकता ।

अनुमानरु उपमानरु आगम अर्थापत्तितें केवल भाय ।
विश्वतत्व ज्ञाता असिद्ध नहिं तिन का सद्विषयत्व लखाय ॥६८॥

-पुरुष वा ब्रह्मादिक के समान वक्ता पन से अरहन्त
विश्व तत्व ज्ञाता नहीं है।

विश्वतत्व ज्ञाता अरहन नहिं वक्तापन तें पुरुष सम जान ।
अथवा ब्रह्मादिक सम वक्ता यामें नहिं बाधक अनुमान ॥९९॥

स दोषावरणों के अभाव रूप विपक्ष हेतु के होते
विरोध नहीं हो सकता ।

विपक्ष हेतु के सम्भवतें सम्भव जानि विरोध अभाव ।
वक्तृत्वादि के प्रकर्षतातें ओनि ही सहै ज्ञान स्वभाव ॥१००॥

दिक के उपमान प्रमाण असम्भव हैं इस कारण
अरहन्त के दोषावरणों का सद्भाव संभव है ।

अनुपलम्भतें सव मानुषके सम्भव नहिं उपमान प्रमान ।
उसतें, उपमानुपमेयोंका बाधक भाव असम्भव जान ॥१०१॥

अर्थापत्ति और असर्वज्ञ भी अरहन्त का बाधक
नहीं होसकता और न विश्व जगत को जानने के लिए
समर्थ हो सकता है ।

अर्थापत्ति अरु असर्वज्ञहू जगत साधने समरथ नांहिं ।
क्षीण अन्यथा भावाभावतें वह उसतें बाधित है नांहिं ॥१०२॥

सर्वज्ञ का अभाव मानने पर वेद अपौरुषेय ईश्वरीय ज्ञान
भी सिद्ध नहीं हो सकता और असर्वज्ञ के कार्य में प्रमा
है तौ अनिष्ट भी सिद्ध होंगे ।

है सरवज्ञ अभाव सिद्धितो आगम अपुरुषेयहू नाहि ।
उनके कारज मे प्रमाणता वा विन अनिष्ट सिद्धिहू थांहि ॥१०३

असर्वज्ञ पुरुष अग्नि वायु आदित्य अङ्गिरा आदि ऋषी वेद वक्ता भी उन अरहन्त के बाधक नहीं हो सकते ।

पौरुषेय: भी असर्वज्ञ जोतन्प्रणीत विस बाधक नांहि ।
अप्रमाण पन तिनके तहा है तत्वपनें धर्मादिव माहि ॥१०४॥

जिनकें अभाव भी प्रमाण निषेधाधार माना गया हैं वह ज्ञान के आगे नास्ति रूप हैं क्यों कि निषेध स्मरण के है ।

है अभाव भी प्रमाण जिनके मानो तिनहि निषेवाधार ।
ज्ञानके अजम नास्ति पना है जब निषेध स्मरणाधार ॥१०५॥

उन नास्तिकों के विश्व तत्व ज्ञाता पन किसी के सिद्ध नहीं हैं और सर्वज्ञ की सवित्ति वा स्मरण भी सिद्ध नहीं है ।

विश्व जगत का ज्ञान किसी मे सम्भव नहि तिनकें या भांति ।
नहि सवित्ती सर्वज्ञहु की पूरब स्मरणहु किह भांति ॥१०६॥

या प्रकार विश्व जगत ज्ञाता कों पर उपगमता का निषेध होने पर उनका स्वइष्ट बाधित हैं ।

विश्व जगत ज्ञाता निषेध जिन जब कहलावे या परकार ।
पर उपगमता के निषेधतें तिनके स्वइष्ट बाधित धार ॥१०७॥

इस कारण सर्वथा मिथ्यैकान्ततें इष्ट सर्वज्ञ सिद्ध नहीं हैं किसी अपेक्षा अनेकान्त तें सिद्ध है तथा इष्ट असंभव है।

अनेकान्तते इष्ट सिद्धि है मिथ्यैकान्ततें इष्ट न सिद्धि।
असर्वज्ञ नहिं इष्ट जगत मे है सरवज्ञ इष्ट सो सिद्धि ॥१०८॥

बाधक पन का निर्णय करि सु विश्व तत्व का ज्ञाता और नेता अरहन्त ही सिद्ध है।

बाधक पन तिन निर्णय करि ही नेता भली भांति है सिद्धि।
सुख वत विश्वतत्व का ज्ञाता वह अरहन्त हमारासिद्धि ॥१०६॥

विपच्च वीत राग विज्ञान की प्रकर्षतातें कर्म रूपी पर्वतों का नाश करने वाला उष्णकी प्रकर्षतातें शीत को नाश करने वाले के समान सिद्ध है।

है विपच्च की प्रकर्षतातें नेता भूभृत कर्म का सोय।
यथा उष्ण की प्रकर्षतातें भेत्ता शीत का निश्चय होय ॥११०॥

प्रथम कर्मों का विपच्ची संवर तथा तप करि संचित कर्मरूपी भूभृतों की निर्जरा परमागम ज्ञाताओं के प्रमाण सिद्ध है।

प्रथमहि कर्म विपच्चीसंवर आगमिनों कें सिद्धि प्रमान।
तप करि सचित कर्मजु भूभृत निर्जर होवैं सिद्धि प्रमान ॥१११॥

उन कर्मों की निर्जरा की प्रकर्षता तें परमात्मा सिद्ध है, तारतम्य हीनाधिक रूप सिद्धि सरधान करना योग्य है।

उनको प्रकर्षतातें निश्चय परम सिद्धि परमात्म जान ।
तारतम्य हीनाधिक सिद्धा उष्ण प्रकर्षिव करि सरधान ॥११२॥

पुद्गलीक द्रव्य कर्म शक्ति रूप भाव कर्म चैतन्य रागादिक अज्ञान मोह क्रोध आदि विकृत विकार रूप आत्मा में सिद्ध हैं ।

द्रव्यभाव के विकल्पपन तें द्विविधि कर्म यहां सरधान ।
हैं अनेक विधि पुद्गलीकजो जीवकेद्रव्य कर्म पहचान ॥११३॥
हैं चैतन्य रूप रागादिक विकृत भाव कर्म बहु भेद ।
क्रोधादिक अज्ञान मोह सब चेतनि तें हैं कथंच अभेद ॥११४॥

प्राकृतिक द्रव्य कर्मों के स्कंध समूह राशियां कर्म भूभृत कहलाते हैं उनका आत्मा से अत्यन्त भेद पृथक होना क्षय कहलाता है ।

द्रव्य कर्म स्कंध राशियां भूभृत कही समाधि तें वेद ।
तिन संतानात्यन्त नाश ही जीव तें विश्लेषण है भेद ॥ ११५ ॥

उनका अत्यन्त क्षय जुदा होना संवर निर्जरा से सतवादियों ने स्वात्म लाभ रूप मोक्ष माना है ।

कृत्स्न कर्म क्षय तें मानी है स्वात्म लाभ हा मोक्ष प्रधान ।
संवर और निर्जरा करि ही सतवादी सब करें प्रमान ॥

नास्तिकवादियों के उनका प्रमाण न होने से प्रलाप मात्र ही है उनका निराकरण कर महान आत्मा आदर नहीं कर सकते ।

नास्तिक वादिन के प्रमाण नहिं या तिनका किया निराकृत मान।
प्रलाप मात्रहिं कथन है तिनका आदर करै न आतम महान ॥११७॥

**सम्यक सरधान ज्ञान चारित्र रूप त्रयात्मक हा मोक्ष मार्ग यथार्थ है अन्य प्रकार विरोध से कदापि नहीं है ऐसा विशेष कर निश्चय है।**

सम्यक दर्शन आदि त्रयत्मक मारगहिं मोक्ष यथारथ जान।
उस विरोध तें नाहिं अन्यथा वह विशेष करि निश्चय मान ॥११८॥

**इस प्रकार बाधा रहित विश्व तत्वज्ञाता वीतराग सर्वज्ञ अरहन्त के आश्रय ही नेतापना साक्षात प्रसिद्ध है सो हे भव्य पुरुषो सरधान करो।**

बाधा रहित मोक्ष मारग का नेता सिद्धि सर्वथा जान।
विश्व तत्व ज्ञातापन आश्रय है साक्षात सिद्धि सरधान ॥११९॥

**बुद्धी वीत निःशेष दोष, गुण समुद्र वन्दने योग्य अरहन्त हैं वेगुण उनका संक्षेप कथन सुनकर सत पुरुषोंको प्राप्त होवे हैं।**

बुद्धी वीत नि.शेष दोष ते गुण समुद्र वन्दित अरहन्त।
वेगुण प्राप्त होंय सत पुरुषन लखि संक्षेप कथन अरहन्त ॥१२०॥

**उन कर्म मलों को नाश कर स्वात्मलब्धी करने वाला ही गुरू हो सकता है।**

मोहाक्रान्त तें गुरू नहिं सम्भव नेता मोक्ष मार्ग का कोय।
उसके बिन सब कलुष ध्वंस तें उपजी स्वात्म लब्धि गुरु सोय ॥१२१॥

**उसको मैं नमस्कार करता हूँ बुद्धी अरहन्त भगवान क्षीण मोह अज्ञान आदि कर्म मल रहित है हस्तामल ज्यों**

साक्षात विश्वतत्व ज्ञाता धर्मेश्वर है ।

तिनकों वन्दों बुद्धी परम गुरु क्षीण मोह अरहन भगवान ।
साक्षात अमलक ज्यों ज्ञाता विश्व तत्व का नाथ सुजान ।। १२१ ।।

इस प्रकार यह आप्त परीक्षा नामा ग्रन्थ प्रति पक्षों को साक्षात नाश करने वाला है और विमोक्ष लक्ष्मी की प्राप्ति के लिये प्रेक्षावान साक्षात ग्रहण करते हैं ।

आप्त परीक्षा नाम ग्रन्थ यह नाशन प्रति पक्षोन साक्षात ।
विमोक्ष लक्षमी की प्रापति कों प्रेक्षावान गहैं साक्षात ।। १२२ ।।

श्री तत्वार्थ शास्त्र रूपी समुद्र से कर्म भूमि में ग्रन्थ रूपी रत्नों की उत्पत्ति ।

वे स्तोत्र तीर्थ की उपमा समान गुरु परम्पराय से पथ प्रदर्शक हैं ।

श्री तत्वार्थ समुद्र शास्त्र तें उद्भव ग्रन्थ रत्न हितकार ।
जो उत्थानारम्भ कालतें मल नाशन कृत शास्त्रन कार ।।१२३ ।।
हैं स्तोत्र तीर्थ उपमा सम पथ दर्शक स्वामी अनुसार ।
सत्यारथ वाक्यार्थ सिद्धि करि विद्यानन्द शक्ति अनुसार ।। १२३।।

श्री तत्वार्थ शास्त्र के प्रथम मुनीद्र का स्तोत्र कुवाद के कुमान की निवृति करने वाला हैं ।

श्री तत्वार्थ शाश्त्र के प्रथमहिं है मुनीन्द्र स्तोत्र सुजान ।
आप्त परीक्षा नाम है याका निवृत्ति करै कुवाद कुमान ।। १२४ ।।

**इसकी छंद रूप भाषा रचना मूल अर्थ को प्रकाश करने वाली है उसे रचकर जयकुमार अपने परम इष्ट अरहन्तादि को अन्त मङ्गल रूप नमस्कार करता है ।**

छंद रूप भाषा रचना यह मूल अर्थ परकासै जान ।
अरहन्तादि पञ्च परमेष्ठी 'जयकुमार' वन्दै धरि ध्यान ॥ १२५ ॥

इस प्रकार यह आप्त अनाप्त का विशेष ज्ञान कराने वाला आप्त परीक्षा ग्रन्थ पूर्ण हुवा ।

॥ इति ॥

ॐनमः सिद्धेभ्यः ।

# ( आर्य समाज सिद्धान्त परीक्षा )

आर्य समाजी आदि अन्यथा करैं कल्पना नाना भांति ।
तिनके मूल सिद्धान्त परीक्षा कहूँ यथा तिन ग्रन्थानु भांति ॥ १
दयानन्द कहैं सुनो शिष्य गण वेदों का जो मूल प्रधान ।
ऊँकार का स्वरूप आगें कहूं सुनो सो वेद प्रमान ॥ २
तथा अन्य सिद्धान्त मूल जो कहू वेद के [illegible] प्रधान ।
सत्यारथ परकाश ग्रन्थ की साक्षीतें मैं लिखूं सुनान ॥ ३
उनकी यथारथ करौ परीक्षा रागद्वेष तजि हित चित आन ।
पक्षपाततें आत्म घात है तजि होवै आतम कल्यान ॥ ४
परमातम जीवातम प्रकृती मूल तत्व कहैं वेद प्रमान ।
इनहींतें सब सृष्टि की उत्पति होय पालन अरु प्रलय सुजान ॥ ५
उपादान कारण सब जग की मूल प्रकृति सत रज तम यान ।
जीवातम सब निमित्त कारण होय शरीर सब कार्य प्रधान ॥ ६
सतचित आनद रूप ईश है ज्ञाता विश्व तत्व सरवज्ञ ।
सत स्वरूप है प्रधान प्रकृती सतचित रूप जीव अल्पज्ञ ॥ ७
है सर्वज्ञ पना स्वभावतें यातें ईशाल्पज्ञ न होय ।
अरु अल्पज्ञ पना स्वाभाविक यातें जिय सर्वज्ञ न होय ॥ ८
ईश दयालू निराकार भी सब व्यापक सब शक्तीमान ।
सृष्टी उत्पादक अरु पालक नाशक फल दाता सो जान ॥ ९
न्यायकारी कर्मानुसार सो वेद ज्ञान परकाशक जान ।
इत्यादिक गुण कहैं अनन्ते तिनका को करि सकै बखान ॥ १०

अब तिनकी भवि सुनौ परीक्षा सत्यासत्य जो करै प्रकाश ।
स्याद्वाद लक्षण प्रमाण करि युक्त्यागम सत्यार्थ प्रकाश ॥ ११

## ऊंकार पद की असंभवता ।

अउ मकार सधित्रय अक्षर ऊकार होय शब्दोत्पन्न ।
ईश्वर वाचक कहैं उसै वे मूल वेद नादि नन्त सुमन्य ॥ १२
ईश्वर वाचक अर्थ कहांतें किस धातूतें किया सुजान ।
तुमने उक्त गुण किहि विधि माने सर्वज्ञादि पनकिम तुम जान ॥१३
अउ मकार कहांतें माना किम किस अर्थ का वाचक कौन ।
सहित प्रमाण कहो कल्पित मति किस २ धातु मे प्रत्यय कौन ॥ १४
शब्द सिद्धि करो अर्थ की सिद्धी लक्षण प्रमाण हेतू आदि ।
सर्वज्ञादि पन किह विधि सम्भव आप्तागम सत्यार्थ सुवादि ॥ १५

## ईश्वर के नियामकता की असंभवता ।

जौ ईश्वर उपरोक्त नियामक तथा प्रवन्धक जगत समाज ।
तौ व्यापै सुख शान्ति जगत मे दु खी न दीखै जगत समाज ॥ १६
पुण्य पाप करने मे स्वतंत्र रु फल भोगन मे जीव परतंत्र ।
पुण्य पाप कर्मानुसार फल सुख दुख भोगै जीव परतंत्र ॥ १७
पापकर्म करने कौं स्वतन्त्र हैं किये जीव ईश दयालू नाहि ।
पिता दयालू निज सुतकौं कभी शक्तिमान पाप करनदे नाहिं ॥ १८
ज्ञातादि शक्ति मान स्वामी का है कर्त्तव्य रोकना पाप ।
पिता दयालू उस प्रवन्ध करि रोकै पूर्व हितें भाव पाप ॥ १९
हिंसा चोरी झूट विषय अरु परिग्रह अन्याय अभक्ष्य कर्म ।
तिहूं काल मे सर्व क्षेत्र में सव जीवन के पापजु कर्म ॥ २०

द्रव्य रूपतें भाव रूपतें कृत कारित अनुमोदतें कर्म ।
संरंभ अ.र समारभ आरभ मन वच तन कृत पापजु कर्म ॥ २१
उक्त ईश संसार प्रवन्धक तौ सुख शान्ति मई होंय जीव ।
है विरुद्ध ससार दु.ख मय अरु अशान्त मय सकल जु जीव ॥ २२
यातें प्रवन्ध कर्त्ता ईश न या नहिं शक्ति प्रवन्धक ईश ।
अथवा दयालू पन न ईश मे वा व्यापक सर्वज्ञ न ईश ॥ २३
दयालुता कर्त्ता पन अथवा न्याय कारी फल दाता धर्म ।
सतो गुणी प्रकृती के उदयतें पुण्य वान जीवन के धर्म ॥ २४
सो किह विधि ईश्वर मे सम्भव इसका भवि जन करो विचार ।
प्रकृति वधते रहित ईश सो है असंग तिन शास्त्रानुसार ॥ २५
कर्म क्लेश अरु विपाक आशा अपरा मृष्ट जो पुरुष विशेष ।
सो ईश्वर कर्मादि रहित सव कर्त्ता किह विधि पुरुष विशेष ॥ २६

## निराकार ईश्वर की असभवता ।

अरु चैतन्य स्वरूप पुरुप का परिच्छेद विन ज्ञेयाकार ।
सन स्वरूप भी असत रूप सो पुष्पाकाश वत निर् आकार ॥ २७
निरा कार कहें ज्ञेयाकार का लोप सर्वथा निश्चय धार ।
ज्ञेयाकार ज्ञान मे झलके वस्तु स्वरूप यथा अनुसार ॥ २८
ज्ञेयाकार विन निराकार जो स्वयं ज्ञान निज विपयन ईश ।
तव चैतन्य स्वरूप ईश किम सत सम्भव नहिं असव सुईश ॥ २९
मनुप सींग वंध्याका पुत्र त्यों निराकार है ईश विचार ।
इन सव की सत्ता संभव नहिं निराकार है असत विचार ॥ ३०
असत स्वरूप कल्पना चेतन ठहरै ईश अचेतन भाय ।
मुक्ति मार्ग उपदेश योग्यपन तव ईश्वर में नहिं ठहराय ॥ ३१

## वेद ईश्वरीय ज्ञान नहीं है।

ज्ञान ईश्वरीय वेद न सम्भव तथा न सम्भव ईशोपदेश।
निराकार ईश्वर वक्ता नहि वेद मत्र वर्णात्मोपदेश ॥ ३२
अग्नि वायु आदित्य अङ्गिरा सृष्टि आदि कर्त्ता उपदेश।
ज्ञान ईश्वरीय हृदय प्रकाशा निर्मल थी उन बुद्धि विशेष ॥ ३३
चारि ऋषी निर्मल हिरदय भी सृष्टि आदि सर्वज्ञ न एष।
सदा जीव अल्पज्ञ मानते तर्क न्याय तुम कहै अशेष ॥ ३४
अल्प ज्ञान गोचर ईश्वर नहिं निराकार गुण कहै अनन्त।
है परोक्ष अत्यन्त ईश सो विषय ज्ञान अल्पज्ञ नसन्त ॥ ३५
तत्व ज्ञान विज्ञान वेद जो है स्वभाव ईश्वर भगवन्त।
सो ईश्वर सर्वज्ञ मे सम्भव अन्य द्रव्य गुण अन्य न संत ॥ ३६
याते वेद मत्र के वक्ता चारि ऋषी सृष्ट्यादि कहन्त।
निज निज अनुभव ज्ञान शक्ति सम रचे वेद ज्ञानेशान सन्त ॥ ३७
सूक्ष्मा न्तरित दूरा रथ सब ऋषा ज्ञान प्रत्यक्ष न मत।
व्योमाम्बु जवत भाहा ज्ञान मय वहु अशक अनभिज्ञ सुसत ॥ ३८

## ईश्वर सृष्टि कर्त्ता नहीं है।

युवा पुरुष स्त्री असख्य होय प्रकृति जीव मिलि दैवी सृष्टि।
सृष्टि नियमतें रहित असम्भव रज वीरज विन मानुषादि सृष्टि ॥ ३९
प्रकृति सृष्टि कारणो पादान है निमित्त कारण सब जिय जान।
कर्त्ता कारण ईश्वर नित्यरु है अनादितें नन्तलों जान ॥ ४०
त्रय कारण सामान्य अनादी मूल तत्व सब सृष्टि बखान।
इनते ही जो सृष्टि की उत्पति होय निरन्तर दैवी वान ॥ ४१

दैवी सृष्टि असम्भव नर पशु प्रत्यक्षानुमानादि प्रमान ।
वृक्ष वनस्पति आदि कार्य सब विशेष कारण क्रम नादि मान ॥ ४२
उपादान कारण विशेष विन कारज विशेष संभव नाहिं ।
थूल सृष्टि कारण विशेष तें भेद रूप होय अन्यथा नाहिं ॥ ४३
सृष्टि आदि मे दैवी सृष्टि ते कहैं मैथुनी मिथ्या वादि ।
उस दैवी का कुछ प्रमाण नहि रज वीरज विन नर पशु आदि ॥ ४४
गर्भज नर पशु सिद्धि मैथुनी युक्त्यागमतें भी क्रम नादि ।
पुत्र कार्य क्रम विचार होतें पूर्व पूर्व कारण पिता नादि ॥ ४५
सिद्धि भये सब सृष्टि उपादान कारण निमित्त सिद्धि अनादि ।
ज्यों ही बीजाङ्कुर आदिक क्रम सर्व वस्तु कारण कार्य नादि ॥ ४६
नाना कार्य के भिन्नि २ के विशेष कारण नाना वार ।
यथा निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध होय कार्य सब तथा प्रकार ॥ ४७
या विधि सिद्धि अनादी सृष्टी उत्पाद व्यय ध्रौव्यात्मक वृत्ति ।
है परिणमन यथा क्रम वर्त्ती पर्याय सादि अनादि प्रवृत्ति ॥ ४८
अनादि निधन द्रव्य मे निश्चय निज पर्याय प्रति क्षण भाय ।
होय उन्मज्जन और निमज्जन जल कल्लोल यथा जल थाय ॥ ४९
धर्मा धर्म नभ काल सु निश्चय गोचर जानि अर्थ पर्याय ।
है व्यञ्जन पर्याय सहित द्वि जीवरु पुद्गलार्थ पर्याय ॥ ५०
द्रव्य परिणमन द्रव्य की पर्याय गुण परिणमन गुण की पर्याय ।
द्रव्य रूप परिणमन यथा है कंचन कुंडल हार पर्याय ॥ ५१
हैं तिन सहभावी गुण नित्यरु क्रम भावी पर्याय अनित्य ।
गुण का स्वरूप मे हैजु परिणमन गुण की सो पर्याय अनित्य ॥ ५२
स्पर्श रस गंध वर्ण यथा गुण नित्य आम्र मे गुण सह भावि ।
नरम कठोररु खट्टी मीठी हरित पीत पर्याय क्रम भावि ॥ ५३

## द्रव्यों का स्तित्व और संख्या अनादि अनन्त गुण पर्याय वान होने से धारा प्रवाह रूप सृष्टि अनादि अनन्त है।

चेतना लक्षण जीव अचेतना है लक्षण अजीव का भाय।
पुद्गल धर्म अधर्मरु आकाश काल द्रव्य पञ्चाजीव भाय॥ ५४॥
अक्षयानन्त राशि जीवों की भव्य अभव्य भाव ते थाय।
है अनादितें छहों द्रव्य सब रहि हैं नन्त काल लों भाय॥ ५५॥
यों अस्तित्व अनादि अनन्त है सर्व जगत का निश्चय धार।
स्पर्श रस गंध वर्ण वन्त है पुद्गल धर्म गमन सहकार॥ ५६॥
है अधर्म स्थिति सहकारी पुण्य पाप इन अथन धार।
आकाशावगाहन सहकारी काल वर्तना है सहकार॥ ५७॥
उदासीनता करि सहकारी प्रेरक रूपन सो सहकार।
भव्य निरन्तर मुक्तिकों जावें पञ्चलब्धि पावन अनुसार॥ ५८॥
तिनकी संख्या जानि यथा क्रम आगम सर्वज्ञ के अनुसार।
तिनका कथन करूंगा आगे आगम युक्ती के अनुसार॥ ५९॥
मुक्ति अभव्य कभी नहिं जावें पञ्च लब्धि कौंप्राप्त न धार।
तीव्रकर्म मिथ्यात उदयकरिभ्रमे जगतमें अनन्तवार॥ ६०॥

## भव्य अभव्य जीवों की राशि संख्या।

उनकी संख्या नतानन्त है यातें जगदास्तित्व सदीव।
भव्य राशि अक्षय अनन्त है याते मुक्त भये भी जीव॥ ६१॥
कालानादितें नन्तकाल लों मोक्ष मार्ग अस्तित्व सदीव।
सर्व राशिका क्षय अरु अन्तन अक्षय अनन्तार्थे वास्तीव॥ ६२॥
मुक्तिन आवें मुक्त भयें सब मोक्ष मार्ग अरु नशै ससार।

गानें आवागमन निरन्तर कालानादितें नन्तलों धार ॥ ६३ ॥
याविधि सन्ख्या परिमित जिनकें तिनकें दोषापत्ति विचार ।
उक्त राशि अक्षय अनन्त ते परिमित संन्यातय निर्धार ॥ ६४ ॥

## मुक्त जीवों के न आने का प्रमाण ।

तत्व ज्ञान तें मुक्ति बंध है मिथ्या अज्ञान ते ससार ।
सो तुम सिद्धि करौ मुक्ती से जिह विधि मुक्त जन्में ससार ॥६५ ॥
है अक्षय अनन्त जिन जिनकी संख्या तिनका सुनौ विचार ।
है आकाश अनन्त प्रदेशी काल समय भी अनन्तधार ॥ ६६ ॥
गमन करें इकदिश में निरन्तर कालानादिते नन्तलों धार ,
तो भी अन्तन सिद्धि गगन का यह निश्चय अनुभव करि धार॥६७॥
जौनहिं तौ करौ सिद्धिअन्त कौं है सम्भव नहि किसी प्रकार ।
त्योंही समय कालके बीतें बीता समय न लौटे धार ॥ ६८ ॥
समय समय प्रति काल नवोनहिं होय व्यतीत यों काल बिचार ।
यों अनादि तें नन्त काल लों समय व्यतीतें अनन्त धार ॥ ६९॥
त्यों अनन्त सख्या के होतें मुक्ति भयें भी रहैं अनन्त ।
जीव राशि अक्षय अनन्त के भेद राशि भी सख्या नन्त ॥ ७० ॥
ज्यों संख्यात भेद संख्यात के अरु-असंख्य के भेद असंख्य ।
त्यों अनन्तके भेद अनन्ते युक्त्यागम सरवज्ञ त्रिसंख्य ॥ ७१ ॥
बीतराग सर्वज्ञ ज्ञान ही निर्मल सूक्षम सकल प्रत्यक्ष ।
त्रिकालज्ञ बाधक अभाव तें ज्ञेय प्रमाण है सकल प्रत्यक्ष ॥७२॥
उस जिनवर अरहन्त उदित सब सूक्षम आदि तत्व प्रत्यक्ष ।
किसी हेतु करि मनुप ज्ञान तें जाने जाय न सो प्रत्यक्ष ॥ ७३ ॥
इनको आज्ञा प्रमाण माने अन्यथा वक्ता नहिं सर्वज्ञ ।

ज्ञापक उपलम्भन तें निश्चय आगम वीतराग सर्वज्ञ ॥ ७४ ॥
सद्वक्ता के वचन तें निश्चय वस्तु व्यवस्था सकल प्रत्यक्ष ।
उस बिन सिद्धि न तत्व अन्यथा प्रमाण बाधित सकल प्रत्यक्ष॥७५॥
ज्ञापक अनुपलम्भजिन तिनकें नहिं सर्वज्ञादिसम्भव कोय ।
व्योमाम्बुज वत मोहा ज्ञानमय अंधकार नास्तिक वच जोय ॥ ७६
यह संक्षेप कथन करि निर्णय आर्य समाजों का सिद्धात ।
स्याद्वाद परमेष्ठी वन्दै जयकुमार निर्मल सिद्धान्त ॥ ७७ ॥

इस प्रकार आर्य समाज सिद्धान्त परीक्षा ग्रन्थ
पूर्ण किया गया ।

दिव्य सत्य रागादि सदोपी देवहु में यातें न महान् ॥ २
तीरथ कृततें गुरु पन सव मे सो शासन विरोधतें नाहि ।
गुरु विन सत मारग को दरशी यातें को इक गुरु तिन मांहि ॥ ३ ॥
दोपावरण हानि कर अतिशय वह नि शेप करण है कोय ।
यथा स्व हेतू वहिरन्तर मल नाशैं शुद्ध चिदानन्द जोय ॥ ४
सूक्ष्मान्तरित दूरारथ सव, हैं प्रत्यक्ष सर्वगत कोय ।
अग्नि आदि अनुमेय पने तें है सर्वज्ञ परम गुरु जोय ॥ ५
सो तुम ही अरहन्त दोप विन तुम वच युक्ति शास्त्र अविरुद्ध ।
तुम्हरे इष्ट तत्व निर्वाधित लक्षण नय प्रमाणतें शुद्ध ॥ ६
तुम मत अमृततें जे वाहिर हैं एकांत वादि हट रूप ।
गुरु पन को अभिमान धरैं जे तिन के वाधित इष्ट स्वरूप ॥ ७
कुशला कुशल कर्म पर लोकरु जिनकें वध मोक्षादि न कोय ।
ग्रहाशक्त एकान्त वादतें वैरी निज पर के हैं सोय ॥ ८

## एकान्त वादियों के दोपापत्ति ।

भाव रूप एकात पदारथ मानैं लोप अभावों का होय ।
सर्वात्मक अरु आदि अन्त विन ठहरै वस्तु स्वरूप न कोय ॥ ६

## चार अभावों का स्वरूप ।

पूर्व अवस्था मे मृतक पिण्ड समय घट अभाव है प्राग अभाव ।
नाश अवस्था समय मे घट का है अभाव प्रध्वंस अभाव ॥ १
घट मे पट का पट मे घट का है अभाव अन्योऽन्य अभाव ।
घट मे जीव का जीव में घट का है अभाव अत्यन्त अभाव ॥ २

## प्राग् अभाव आदि के लोप में अनादी पना आदि दोप ।

घट पटादि सव कार्य अनादी लोपैं प्राग् अभाव के होय ।

क्रमतें अर्पित उभय द्वैत वह अरु अशक्तसह वाच अवाच ।
अवक्तव्य उत्तर करि जानों निज जिन हेतु भङ्गत्रय साच ॥ १६ ॥
अविनाभावी इक धर्मी मे है अस्तित्वसहित प्रतिषेध ।
है साधर्म्य विशेषण तातें यथा विवक्षा उस अन भेद ॥ १७ ॥
है विधेय प्रतिषेध रूप सब गोचरशब्द विशेषजु भाय ॥ १८ ॥
साध्य धर्म यथा हेतु अहेतू आदि अपेक्षा निश्चय थाय ॥ १९ ॥
यथा उक्त नय करि सब जानौ भवि जन शेष भङ्ग जो होय ।
हे मुनीन्द्रतव शासन माहीं देखैं कुछ भी विरोध न होय ॥ २० ॥
या विधि विधि निषेध करि निश्चित सो सब वस्तु अर्थकृत होय ।
या विधि नहिं तौ यथा कार्य नहिं चाहें बहिरन्तरु पधि होय ॥२१॥
धर्म धर्म मे अर्थ अन्य ही है धर्मी मे धर्म अनन्त ।
अङ्गित्तपन मे अङ्गित्तमान्त की शेष की नहिं प्रधान न सत ॥ २२ ॥
धर्म धर्म मे अर्थ अन्य है इक धर्मी मे धर्म अनन्त ।
अस्तित्वादि प्रधान कहें तब सबही शेष प्रधानता सत ॥ २२ ॥
एकानेक विकल्प आदि में उत्तर जोडि प्रक्रिया भङ्ग ।
स्याद्वादनय यों करि जानैं नय मे विशारद प्रक्रिया भङ्ग ॥ २३ ॥

## सर्वथा अद्वैतादि रूप एकान्तवाद ।

है अद्वैतै कात पक्ष मे दृष्ट भेद ते विरोध भाय ।
क्रिया कारको का इकपन तहा आपतें नहि उत्पन्न कहाय ॥ २४ ॥
कर्म द्वैत फल द्वैतादिक नहिं तिनके नाहि लोक परलोक ।
विद्या विद्या उभय न सम्भव अरु नहि सिद्धि बंध अरु मोख ॥२५
हेतू ते अद्वैत सिद्धि तो हेतू साध्य द्वैत हैं सिद्धि ।
जौ बिन हेतू बचन मात्र ते तो किम द्वैत न है मम सिद्धि ॥२६॥

ज्यों विन हेतु अहेतु न सम्भव त्यों अद्वैत द्वैत विन नाहिं ।
संज्ञिन का प्रतिषेध निरन्तर संज्ञिन विन प्रतिषेध न थाहिं ॥ २७ ॥

## (वैशेषिक आदि मत एकान्त कल्पना)

है पृथक्त्व एकान्त पक्ष मे तो अपृथक पृथक तें सिद्धि ।
जो पृथक्त्व करि पृथकहि पन गुण स्थिति वस्तु अनेक प्रसिद्धि॥२८॥
संतानरु समुदाय साधर्म्यरु प्रेत्यभाव निरअंकुश सिद्धि ।
वे सब नहिं एकत्व लोप में जो सब निरअंकुश हैं सिद्धि ॥ २६ ॥
तो एकत्व भाव के लोपैं नहि सतति अरु नहि समुदाय ।
नहि साधर्म्य प्रेत्य भावादिक जो सब सिद्धि निरंकुश भाय ॥ २६ ॥
सत स्वरूपतें भिन्नि सर्वथा ठहरैं असत ज्ञान सब ज्ञेय ।
ज्ञान अभाव भयें सम्भव नहिं जो हैं बहिरन्तर सब ज्ञेय ॥ ३० ॥
है सामान्य अर्थ की वाचक वाणी निर्विशेष जिन मांहि ।
तिन एकान्त वचन सब मिथ्या अरु सामान्य सम्भवै नांहिं ॥ ३१ ॥
नहिं विरोधतें उभय एकमे मानै स्यादवाद जो नांहिं ।
अरु अवाच्य त्रयशेष भङ्ग नहिं कहते अवक्तव्य तिन मांहिं ॥३२॥

## (जैन मत की यथार्थ कल्पना)

अनापेक्ष जो पृथक्त्वैकता दोनौ हेतु अवस्तु स्वरूप ।
वुही पृथक्त्वैकत्व यथारथ साधें निज निज हेतु स्वरूप ॥ ३३ ॥
सत सामान्य पनें सब इकता द्रव्यादिक ते पृथक स्वरूप ।
भेदाभेद विवक्षा तें लखि हेतू असाधार सम रूप ॥ ३४ ॥
एक विवक्षा अनि अविवक्षा साधे वस्तु मे धर्म अनन्त ।
जब सतरूप विशेषण इच्छा तब नहि असत विवक्षा संत ॥ ३५ ॥

भेदाभेद जु प्रमाणगोचर सवृत रूप असम्भ नांहि।
वे एकत्र मिद्धि अविरोधी गौणरु मुख्य विवचा माहिं॥ ३६॥

## ( सांख्य आदि मत एकान्त कल्पना )

अरु नित्यत्वै कान्त पच्च कौं माने नाहिं विक्रया सिद्धि।
प्रथमहि कारक तिन अभाव ते तिनका क्या प्रमाण फल सिद्धि॥३७
प्रमाण कारक तें जु प्रकाशित वे हैं इन्द्रियार्थवत व्यक्त।
जौ वे नित्य विकार्य रूप किम साधू तुम शासन वहिरस्थ॥ ३८।
सतन्वरूप जौ कार्य सर्वथा पुवत उत्पति सिद्धि न होय।
है नित्यत्वैकान्त वाधिनी तिन परिणाम कल्पना जोय॥३६॥
जिनकें पुण्यरु पाप क्रिया नहिं अर नहिं प्रेत्यभाव फल कोय।
बंध मोच आदिक सम्भव नहिं जिनकें तुम विन नायक होय॥ ४०॥

## ( वौध आदि मत एकान्त कल्पना )

च्रणिकै कान्त पच्च के मानैं सम्भव नांहिं प्रेत्य भावादि।
प्रति भिज्ञादि अभाव होंय सव अरु नहिं कार्यारम्भ फल आदि॥४१॥
असतरूप जौ कार्य सर्वथा उत्पति पुष्पख वत नहिं तास।
उपादान भी नियम न सम्भव अरु नहिं कार्य जन्म आश्वास॥४२॥
अन्य भाव अरु विन अनवय के हेतू फल भावादिक नांहि।
संतानान्तर वत्जु एक की तद्वत पृथक सुसंतति नांहि॥ ४३॥
अनन्य की अन्यों मे संवृति सो क्या मिथ्या सम्भव नांहिं।
संवृत विन मुख्यारथ नाहीं मुख्यारथ विन संवृति नांहिं॥ ४४॥
सव धर्मों मे चारि कोटियां विकलपकीं जु असम्भव होंय।
तौ अन्यत्व अवाच्य[तत्व सव]तद्.वत तिन]संतान सुहोय]॥ ४५॥
अवक्तव्य कहना सम्भव नहिं विकलप चारि कोटि के माहि।

सर्वधर्मतें रहित अवस्तु तिन न विशेष्य विशेषण थाहिं ॥ ४६ ॥
है सत सज्ञिन द्रव्यादिक का पर द्रव्यादिकतें प्रतिषेध ।
असत भेद सो भाव रूप नहिं जहा स्थान विधो प्रतिषेध ॥ ४७ ॥
सर्व धर्मतें रहित अवस्तु कहना यह भी सम्भव नाहि ।
वस्तुहि अवस्तु ताकों प्रापति तिस प्रक्रिया विपर्यय थाहिं ॥ ४८ ॥
सर्व धर्म जो अवक्तव्य हैं तो तिन कहना किह विधि होय ।
परमारथ के भयें विपर्यय संवृत मिथ्या ही अब लोय ॥ ४६ ॥
अशक्य पनतें क्या अभावतें क्या अबोधतें कहौ अवाच ।
आदि अन्त द्वि विकल्प कहनाछद्मस्थ न किम स्फुट वाच ॥५०॥
अभिप्राय विन हिंसाकर्त्ता विन हिंसा कर्त्ता अभिप्राय ।
वंध करै दौनौंतें रहित सो चित्तावधकौं प्राप्त न भाय ॥ ५१ ॥
विना हेतु के नाशक हैं तो हिंसा हेतू हिंसक नाहि ।
चित्त संतती नाशजु मुक्ती साधन अष्टअङ्ग हू नांहि ॥ ५२ ॥
जौ विरूप कारज प्रारम्भकौं कहते हेतु समागम सार ।
तौ अनन्य आश्रयतें दौनौं अविशेष्यतें अयुक्ति इव धार ॥ ५३ ॥
स्कंधरु सतति जे सवही संवृत पनतें संस्कृत नाहिं ॥
तिनकी स्थिति उत्पत्ति वय सव खर विषाणवत सम्भव नाहि ॥५४
नहि विरोध तें उभय एक मे मानै स्यादवाद जो नाहिं ।
अरु अवाच्य त्रय शेष भङ्ग नहिं कहते अवक्तव्य तिन माहिं ॥ ५५॥

## ( जैन मत की यथार्थ कल्पना )

प्रतिभिज्ञान तें नित्य सुकहिये नाहीं अकस्मात अविछेद ।
काल भेद तें क्षणिक वुही है निर्मल वुद्धि लहै नहिं खेद ॥ ५६ ॥
व्यक्तान्वय सामान्य रूप तें है नहिं उत्पति और विनाश ।

नाशोत्पाद विशेष रूप सत सह इकमे उदयादिक वास ॥ ५७ ॥
कार्योत्पाद विनाशक हेतू लक्षण नियम रूप ते भिन्न ।
नहिं जात्यादिक अवस्थान तें वे अनपेक्षा पुष्पख वन्न ॥ ५८
घट मौली अरु सुवरण अर्थी नाशोत्पाद स्थिती माहि ।
शोक मोह माध्यस्थ भाव कों धारें निज निज हेतू माहि ॥ ५६
दुग्धव्रती दधि कों नहिं खावै अरु दधि व्रती न दुग्धाहार ।
गोरसत्यागी उभय न खावैं या विधि तत्व त्रयात्मक सार ॥ ६०

## ( वैशेषिक मत की एकान्त कल्पना )

कारण कार्यजु भिन्नि सर्वथा अरु गुण गुणी उसी परकार ।
अरु सामान्य विशेप भिन्नि कहि धारैं जो एकान्तभिचार ॥ ६१ ॥
अनेक वृत्तीं नांहिं एक कीं भाग अभाव न इक वहुभाग ।
अथवा तिन भागित्व भावतें नहिं एकत्व सिद्धि वहुभाग ॥ ६२ ॥
देश काल के विशेषतें भी विरती भिन्नि पृथक ज्यों होय ।
मूर्तिमान कारण कारज में सम्भव नहिं समानता जोय ॥ ६३ ॥
आश्रय आश्रयी भाव पनेतें समवाय न स्वातंत्रय नांहि ।
तिन अयुक्त सम्बन्धजु कहना समवायसु करि सम्भव नाहिं ॥६४॥
सामान्यरु समवाय सभापति एकैकत्र मांहिं जौ होय ।
तौ बिन आश्रय किह विधि होवै उत्पति नाशादिक विधि जोय ॥६५॥
है सामान्यरु समवायों का जौ सर्वथा अनभि सम्बन्ध ।
हैं खपुष्प वत तीनि विधी उस तिन करि अर्थ का नहिं संबंध॥६६॥
जो सामान्यरु समवायसु करि है सम्बन्ध सर्वथां नाहिं ।
तो तिन करि गुण गुणी आदि का नहिं सम्बन्ध विधी त्रय नांहिं॥६७॥
जो अनन्यता परमाणू मे तौ संघात विभाग स्वरूप ।
असंघात पन तें जु चतुष्टय भूतैकान्त मे भ्रांति स्वरूप ॥ ६७ ॥

## ( वैशेषिकों के कार्य के भ्रांत ठहरने से कारण की भ्रांतता )

कार्य भ्रांत तें अणु भ्रांत हैं कारण लिङ्ग कार्य कछु नाहि ।
उभयाभावतें उनमें स्थिति गुण जाती इतरादिक नाहि ॥ ६८
तिन एकत्व भाव के लोपैं शेष अभाव है अविनाभाव ।
द्वित्व रूप सन्ध्या विशेष अरु सगुन मिथ्या ही ठहराव ॥ ६९

## ( उभय रूप आदि सप्त भङ्ग सिद्धी मे भी दोष )

नहिं विरोध तें उभय एक में मानें स्याद्वाद जो नाहिं ।
अरु अवाच्य त्रय शेष भङ्ग नहिं कहते अवक्तव्य तिन माहिं ॥ ७०

## ( जैनों के एकत्व और भिन्नता का प्रमाण )

द्रव्य और पर्याय एकता तिनमें नहि व्यतिरेक अभाव ।
शक्तिमान अरु शक्ति भावते परिणामी परिणाम स्वभाव ॥ ७१
संज्ञा संख्या अरु विशेषते अथवा निज निज लक्षण भेद ।
प्रयोजनादि तें नाना पन है तिनमें नाहि सर्वथा भेद ॥ ७२

## ( सर्वथा एकांत में अपेक्षा अनपेक्षा आदि में दोष )

जो आपेक्षिक सिद्धि सर्वथा कारण कार्य सिद्धि तब नांहि ।
अनापेक्षिक सिद्धि सर्वथा तो सामान्य विशेष न याहि ॥ ७३

## ( उभय रूप आदि सप्त भङ्ग में भी दोष )

नहिं विरोधते उभय एक मे मानें स्याद्वाद जो नाहिं ।
अरु अवाच्य त्रय शेष भङ्ग नहि कहते अवक्तव्य तिन माहिं ॥ ७४

## ( जैनों के धर्म और धर्मी की अभिन्नता आदि अन्य २ अपेक्षा है स्वतः नहीं )

वर्मरु धर्मी अविनाभावी अन्यरु अन्य विवक्षा सिद्धि।
स्वत स्वरूप न सिद्धि सम्भवै कारक ज्ञापकाग वत सिद्धि ॥ ७५

## ( सर्वथा हेतू वा आगम आदि सप्त भङ्ग रूप सिद्धि मानने में दोप )

सिद्धि हेतुतें सर्व वस्तुतौ प्रत्यक्षादितें गति नहि होय।
जौ आगमते सिद्धि वस्तुसव तौ विरुद्ध मत सिद्धिहु होय ॥ ७६
नहि विरोधतें उभय एक मे मानै स्याद्वाद जो नांहिं।
अरु अवाच्य त्रय शेष भङ्ग नहिं कहते अवक्तव्य तिन माहि ॥ ७७

## ( जैनों के हेतू तथा आगम आदितें सिद्धी का प्रमाण )

हेतू साध्य हेतू करि साधित वक्ता तिन अनाप्त सरधान।
जिनका वक्ता आप्त वचनतें साधित आगम साध्य सुजान ॥ ७८

## ( सर्वथा अन्तरङ्ग पदार्थ मानने में दोप )

अन्तरङ्ग एकात अर्थ तौ मिथ्या वोध वचन सव होंय।
तिन प्रमाण आभास कहावे सत प्रमाण विन सिद्धि न होंय ॥ ७९

## ( सर्वथा विज्ञप्ति मात्र तें सिद्धी में दोप )

साध्यरु साधन की विज्ञप्ती जौ विज्ञप्ति मात्र ते होय।
तौ साध्यरु हेतू सम्भव नहिं हेतु प्रतिज्ञा दोपतें सोय ॥ ८०

## ( सर्वथा वहिरङ्ग पदार्थ मानने में दोप )

वहिर अग एकांत अर्थ तो होवे लोप प्रमाणाभास।
अर्थ विरुद्ध कथन के कर्त्ता कारज सिद्धि करैं सव तास ॥ ८१

## ( सर्वथा उभय रूप आदि सप्त भंग में भी दोष )

नहिं विरोधतें उभय एक मे मानें स्यादवाद जो नाहि ।
अरु अवाच्य त्रय शेष भङ्ग नहिं कहते अवक्तव्य तिन माहिं ॥ ८२

## ( जैनों के भाव प्रमेय आदि की अपेक्षा सिद्धी )

भाव प्रमेय अपेक्षा करि ही होवै लोप प्रमाणाभास ।
वहिर प्रमेय अपेक्षा करि ही होवै लोप प्रमाण जु तास ॥ ८३

## ( वाह्य अर्थ और अन्तरंग अर्थ का स्वरूप )

जीव शब्द सो बाह्य अर्थ है संज्ञा पनतें हेतु सम जान ।
अरु मायादि भ्राति की सज्ञा मायादिक तें प्रमावत मान ॥ ८४

## ( वुद्धि शब्द अर्थ वुद्धि आदि के वाचक हैं वे और वोध तुल्य हैं )

वुद्धयारु शब्द अर्थ की संज्ञा वाचक वुद्धयादिक की जानि ।
वुद्धियादिक अरु वोध तुल्य हैं तीनों प्रति विम्बक तिन मानि ॥ ८५

## ( सर्वथा एकांत में वक्ता आदि की भ्रांतता )

वक्ता और प्रमाता श्रोता भिनि तिन वाक्य प्रमा अरु वोध ।
भ्रांत होंय तो प्रमा भ्राततें बाह्यर्थेतर तादृश वोध ॥ ८६

## ( वुद्धि आदि के वाक्य आदि की भिन्नता तथा सत्य असत्य की व्यवस्था )

वुद्धि शब्द अरु प्रमाण पन के भिनि हैं वाक्यरु वोध प्रमा. ।
सत्यासत्य जो अर्थ व्यवस्था ठहरै आप्तानाप्तक्रमा. ॥ ८७

## ( सर्वथा दैवयोग वा पुरुषार्थ आदि सप्त भङ्ग रूप एकान्त से सिद्धी मे दोष )

दैव योगते सिद्धि अर्थ की तौ पौरुष तें दैवन होय।
दैव योगतें मुक्ति असम्भव अरु पुरुषारथ निष्फल होय॥ ८८
जौ पौरुषते सिद्धि अर्थ की पौरुष दैवततें किम होय।
सर्व प्राणी पौरुष के कर्त्ता सब मे अर्थ सिद्धि क्यों न होय॥ ८६
नहिं विरोधतें उभय एक मे मानैं स्यादवाद जो नाहि।
अरु अवाच्य त्रय-शेष भंग नहि कहते अवक्तव्य तिन मांहिं॥ ६०

## ( जैनों कें दैव योग आदि से सिद्धी का यथार्थ प्रमाण )

अवुद्धि पूर्वापेक्षिक सिद्धी निज दैवततें इष्ट अनिष्ट।
अरु वुधि पूर्व व्यपेक्षा सिद्धी निज पौरुषतें इष्ट अनिष्ट॥ ६१

## ( मिथ्या वादियों कें पुण्य पाप के तथा सुख दुख के हेतुओं की मिथ्या कल्पना में दोष )

पर में दु खतें पाप बंध होय अरु सुखतें होय पुण्य जु भ्रात।
द्रव्य अचेतन अरु कषाय विन होवै बंध निमित् या भ्रात॥ ६२
निजमे दुखतें पुण्य बन्ध होय अरु सुखतें होय पापजु भ्रात।
वीत राग मुनि विद्वानहु के होवै बन्ध निमित या भ्रात॥ ६३
नहिं विरोधते उभय एक मे मानैं स्यादवाद जो नाहि।
अरु अवाच्य त्रय शेष भङ्ग नहि कहते अवक्तव्य तिन माहि॥ ६४

## ( जैनों कें सुख दुःख और पुण्य पाप का यथार्थ हेतू )

हैं विशुद्ध सक्लेश भाव ही सुख दु ख कारण निज पर जान।
पुण्य पाप आश्रव यथा क्रमतें या विन सव मत हैं अन जान॥ ६५

( सर्वथा एकांत वादियों के बंध मोक्ष के हेतुओं में दोष )

अज्ञानहिंते बन्ध होय ध्रुव ज्ञेयानन्त ते केवलि नाहिं।
अल्प ज्ञानते मुक्ति कहैं तो वहु अज्ञानते सम्भव नहिं॥ ९६

नहिं विरोधतें उभय एकमें मानें स्याद वाद जो नाँहिं।
अरु अवाच्य त्रय शेष भङ्ग नहिं कहते अवक्तव्य तिन माहिं॥ ९७

( जैनों कें बंध मोक्ष का यथार्थ हेतू )

है अज्ञान मोहतें बंधरु नहिं अज्ञानतें वीतें मोह।
मोह रहित स्तोक ज्ञानतें होवै मुक्ति न सहित जु मोह॥ ९८

( रागादिक भाव और कर्म बंध तथा उनका प्रवाह और हेतुओं के अस्तित्व की सिद्धी )

कामादिक विचित्र भावौं की उत्पति कर्म निबन्धानुसार।
वे अरु कर्म स्वहेतू तें हैं शुद्धाशुद्धि शक्ति अनुसार॥ ९९

(शुद्ध अशुद्ध शक्ति और उसकी व्यक्तता का काल और दृष्टांत )

शुद्धा शुद्ध शक्ति जीवन में पाक्यापाक्य शक्ति वत जान।
शुद्ध की सादि अनादि अशुद्ध की व्यक्तता स्वभाव अतर्क जान॥ १००

( जैनों कें तत्व ज्ञान प्रमाण के भेद और लक्षण )

तत्व ज्ञान तव मत में प्रमाण है युगपद भासन सब इक नन्त।
अरु क्रम भावी ज्ञान दूसरा स्यादवाद नय संस्कृत संत॥ १०१

( जैनों कें तत्व ज्ञान का फल )

आदि ज्ञान फल कही उपेक्षा शेषका ग्रहण त्याग वुधिजान।
पूरव का अज्ञान नाश वा सब का फल नाशन अज्ञान॥ १०२

## ( स्यात् पदका भावार्थ कथंचित किसी अपेक्षा है )

वाक्य मे अनेकांत का द्योतक अरु प्रति गम्य विशेषक जान।
स्यान्निपात है अर्थ योगते नव केवलि अरु तुम शिष्यान ॥ १०३

## ( स्यात् पद किसी अपेक्षा विशेष रूप से यथार्थ बोधक है )

स्याद वाद एकांत सर्वथा त्याग ते किं वृति चिद् विधि जान।
सप्त भग नय की जु अपेक्षा हेयादेय विशेषक मान ॥ १०४

## ( स्याद वाद परोक्ष और केवल ज्ञान प्रत्यक्ष सर्व तत्वौं का प्रकाशक है )

स्याद वाद अरु ज्ञान जु केवल सब तत्वों का करै प्रकाश।
भेद प्रत्यक्ष परोक्षहि का है अन्य प्रकार अवस्तु प्रकाश ॥ १०५

## नय का लक्षण।

साध्य के धर्म समानहि करि कें साधर्मीतें है अविरोध।
स्याद वाद करि विभाक्तार्थ का विशेष व्यञ्जक नय अविरोध ॥ १०६

## द्रव्यों की तथा त्रिकाल विपयी धर्मो की नय उपनय करि जैनों कें यथार्थ सिद्धी।

नय उपनय करि त्रिकाल विपयी एकांतों का समुचय जान।
अविभ्राट सम्बन्ध भाव करि द्रव्य हैं एकानेक प्रमान ॥ १०७

## एकान्त पर ( शंका तथा सामाधान )

मिथ्या का समूह क्या मिथ्या नहि एकातहु मिथ्या नाहिं।
निरपेक्षा नय हो मिथ्या है अरु सापेक्ष अर्थ कृत थाहिं ॥ १०८

## ( विधि निपेध करि यथार्थ सिद्धी अन्यथा दोपापत्ति है )

विधि निषेध करि अर्थ का निश्चय होवै नाहि अन्य परकार।
होय अन्यथा तो अवश्य ही नहि विशेष पन अन्य प्रकार ॥ १०९

( सर्वथा तद आदि रूप कल्पना मिथ्या है और स्याद-वाद रूप सत्य है )

तदृतद वस्तु वचन प्रत्यक्ष जु तदही रूप कहे जो भाय।
सत्य नहीं तब मृपा वाक्य करि देशन तत्वारथ किम थाय॥ ११०

( प्रत्येक वचन का अर्थ निपेध करना अन्य वचन का स्वभाव है और स्वार्थ सामान्य मिथ्या है )

अन्य वचन का अर्थ निरंकुश प्रतिपेधन है वचन स्वभाव।
जिस सामान्य स्वार्थ प्रति पादक है तिम वचन ख पुप्प स्वभाव॥१११

( मिथ्या और सम्यक शब्दार्थ की विशेप पहचान )

निर्विशेप सामान्य वचन जिन शब्दारथ तिन मिथ्या धार।
है अभि प्रेत विशेप आप्त का लक्षण सत्यारथ स्यात्कार॥ ११२

( स्याद वाद करि ही विधि निपेध और हेयादेय पना है अन्य प्रकार नहीं )

ईप्सितार्थ का विधे यांग जो है प्रति पेध सहित अविरोध।
त्यों ही हेयादेय पना लखि सुस्थित स्याद वाद अविरोध॥ ११३

( आप्त मीमांसा ग्रन्थ का कार्य )

आतम हित के इच्छक जे भवि तिन कौं आप्त मी मांसा ग्रन्थ।
सम्यक मिथ्या उपदेशारथ निश्चय करै विशेप वरन्त॥ ११४

( जिनेन्द्र भगवान के कल्याण कारी वचनामृत का प्रभाव और अंत मगल )

क्लेशावेप प्रपञ्च नाशकौं जो कहलावैं चन्द्र समान।
विपमैकात ध्वान्त कौं नाशैं नय प्रमाण जिन सूर्य समान॥

जिन के आगम उदधिकणों जो परवादी सेवें निज मान ।
सो जिनेन्द्र जयवन्त जगत पति जय कुमार वन्दै धरि ध्यान ॥११५

( इस प्रकार यह आप्त मीमासा न्याय ग्रन्थ समाप्त है )

---

## ( यथेष्ट प्रार्थना )

रहे शास्त्र अभ्यास निरन्तर जिन पति वन्दन रहै हमेश ।
सगति सर्वदा रहै आर्यों की सद्व्रतों की गुण कथा हमेश ॥ १ ॥

दोष वाद मे मौन रहू मैं सर्वतें प्रिय हित कहूं वच देश ।
भावना आतम तत्व की वर्त्तें भव भव मे मोहि मिलें जिनेश ॥ २ ॥

क्षेम कुशल सव प्रजाके वर्त्तो धार्मिक राजा होय वलवान् ।
समय समय प्रति सम्यक वर्षा व्याधि नाश प्राप्त होंय सुजान ॥ ३ ॥

दुर्भिक्ष मरी चौरादिक भय नाश प्राप्त होंय हे भगवान ।
होय संसार मे सव सुखदाई धर्मचक्र जैनेन्द्र महान ॥ ४ ॥

---